प्रीतिरसावतार महाभावनिमग्न
श्रीराधा बाबा

(प्रथम भाग)

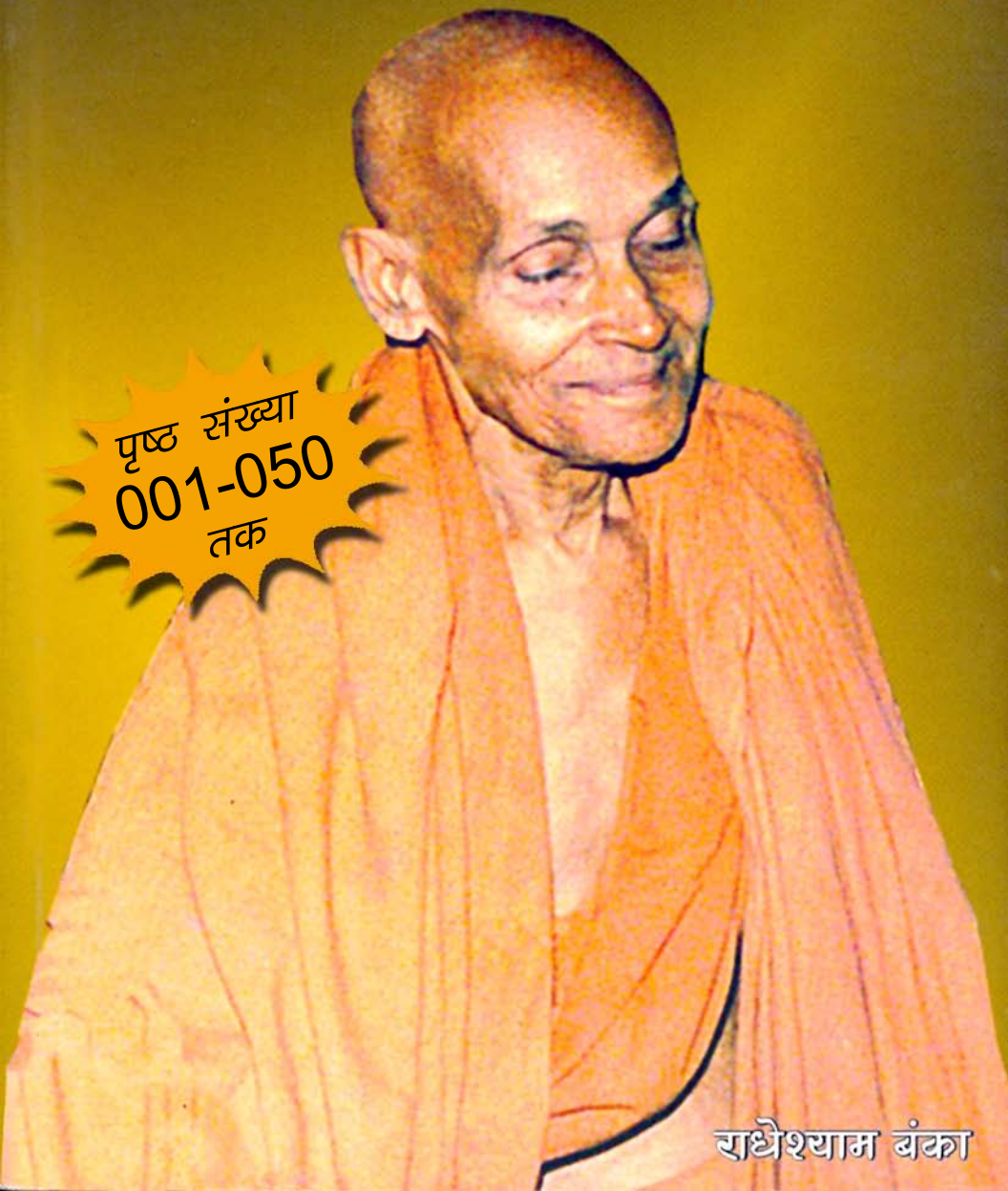

पृष्ठ संख्या
001-050
तक

राधेश्याम बंका

प्रीतिरसावतार महाभावनिमग्न श्रीराधा बाबा

वंश परिचय

जैसे आमका मधुर फल आमके सुन्दर वृक्षमें लगता है, वैसे ही किसी महान संतका आविर्भाव महान संत-परिवारमें होता है। संत-जीवन की महान गरिमाकी अभिव्यक्तिके लिये परिवारका संतोचित वातावरण आवश्यक पृष्ठभूमिका कार्य करता है। प्रीतिरसावतार महाभावनिमग्न श्रीराधाबाबाका आविर्भाव बिहार प्रदेशके मिश्र जातीय ब्राह्मण परिवारमें हुआ था। बिहार प्रदेशके गया जिलामें एक फखरपुर ग्राम है, जो सोनभद्रके तटके समीप अरवल ग्रामसे तीन मील पूर्वकी ओर स्थित है। इस ग्रामका यह मिश्र कुल, अपने संतत्व एवं श्रेष्ठत्वके लिये आस-पासके अनेक ग्रामोंमें बड़ा विख्यात रहा है। इस संत-परिवारके आस्तिक-सात्त्विक वातावरणमें श्रीराधाबाबाका आविर्भाव होनेसे यह परिवार और यह ग्राम सभीके लिये वन्दनीय बन गया।

यह मिश्र परिवार पहले 'विश्वनाथ बिगहा' में बसा हुआ था। फिर परिवारके लोग 'विश्वनाथ बिगहा' से आकर फखरपुर ग्राममें बस गये। श्रीराधा बाबाके दादाजीका नाम था पं. श्रीअम्बिकादत्तजी मिश्र। भगवत्कृपासे पं. श्रीअम्बिकादत्तजीको पाँच पुत्र प्राप्त हुए– श्रीजयपाल, श्रीभूपाल, श्रीश्रीपाल, श्रीमहीपाल और श्रीदेवशरण। इन पाँचों भाइयोंके वंश-विस्तारकी संक्षिप्त जानकारीके लिये 'मिश्र वंश वेलि' को आगामी पृष्ठ पर देखना चाहिये।

पं. श्रीआम्बिकादत्तजीने श्रीभूपालजीको बड़े चावसे पढ़ाया और

उन्होंने बड़ी योग्यता प्राप्त कर ली। विधिका विधान बड़ा विचित्र है, विवाह होनेके थोड़े दिन बाद ही सर्पदंशसे श्रीभूपालजीका देहान्त हो गया। अपने सुपठित-सुयोग्य पुत्रकी असामयिक मृत्युसे पं.श्रीअम्बिकादत्तजीको अत्यधिक शोक हुआ। शोकाकुल पण्डितजीने निश्चय कर लिया कि अब किसी पुत्रको पढ़ाना ही नहीं है।

श्रीमहीपालजीके हृदयमें बचपनसे ही वैराग्यके भाव तो उठा ही करते थे, इसीके साथ-साथ विद्यार्जनके लिये भी बड़ी लालसा थी, परंतु उन्हें पिताजीकी ओरसे कुछ भी प्रोत्साहन नहीं मिल रहा था। एक दिन वे चुपचाप अपने घरसे ऐसे स्थानपर चले गये, जहाँ पठन-पाठनकी सुविधा थी। वहाँ पहुँच कर उन्होंने संस्कृत विद्यालयमें पढ़ना आरम्भ कर दिया और फिर गाँवपर पिताजीके पास पठन-पाठन सम्बन्धी सूचना भेज दी। अध्ययनके प्रति उनकी उत्कट रुचि देखकर इस बार पिताजीने विरोध नहीं किया। पं.श्रीअम्बिकादत्तजीको कुछ दिनों बाद ज्ञात हुआ कि मेरे अध्ययनशील पुत्रका वैराग्य-भाव उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। इससे वे चिन्तित हो उठे और उन्होंने शीघ्र ही श्रीमहीपालजीका विवाह कर दिया। श्रीमहीपालजी मिश्रने इच्छा न होते हुए भी गृहस्थ जीवन स्वीकार किया मात्र गुरुजन-आदेश-पालनके रूपमें।

पं.श्रीमहीपालजी मिश्रको जीवनसंगिनी भी प्रभु-कृपासे अपने स्वभावके अनुरूप ही मिली थी। जिस प्रकार पं.श्रीमहीपालजी अपने सात्त्विक विचार, आस्तिक मति, निर्दोष व्यवहार, अकलुष आचरण और निस्स्पृह जीवनके कारण सभीके लिये श्रद्धेय बन गये थे, उसी प्रकार आपकी जीवनसंगिनी भी धर्म-निष्ठा, साधु-सेवा, सर्व-हितैषिता, परदुखकातरता, जन-वत्सलता और हित-परायणताके कारण सदैव समादृत रही।

संत-सेवाके समान ही, श्रीमिश्रजीकी जीवनसंगिनीको अति प्रिय थी भगवदुपासना। पुरोहिती वृत्तिके कारण घरमें पूजा-पाठका वातावरण था ही। श्रीमिश्रजीकी सहधर्मिणी पढ़ी-लिखी नहीं थी। अक्षर ज्ञान नहीं होनेके बाद भी उसे रुक्मिणीमंगल, सीतास्वयंवरके प्रसंग याद थे। वह इन प्रसंगोंको बड़े प्रेमसे गुनगुनाया करती थी। श्रीजयदेवकृत 'गीतगोविन्द' उसे कण्ठस्थ था। वह प्रतिदिन सम्पूर्ण गीतगोविन्दका पाठ कर जाया करती थी। वह शुद्ध

उच्चारण नहीं कर सकती थी। वह यह भी नहीं जानती थी कि वह जिसका पाठ कर रही है, उसके श्लोकोंका अर्थ क्या है, परंतु श्रद्धा-पूरित हृदयसे वह सम्पूर्ण गीतगोविन्दका पाठ अवश्य करती थी। प्रत्येक पूर्णिमाको वह भगवान श्रीसत्यनारायणजीकी कथा अवश्य करवाती थी। कथाके समय भगवान श्रीशालिग्रामजीका सविधि पूजन एवं उसके बाद प्रसाद-वितरणमें उसका बड़ा उल्लास रहा करता था।

पं.श्रीमहीपालजी मिश्र अपने भालपर ऊर्ध्व-पुण्ड्र तिलक लगाया करते थे। इस तिलकके आधारपर यह अनुमान किया जा सकता है कि श्रीरामानुज सम्प्रदायमें उनकी दीक्षा हुई होगी। श्रीपण्डितजीका जीवन बड़ा ही तितिक्षापूर्ण, तपपरायण, कर्तव्यनिष्ठ, धर्मभीरु तथा सत्यप्रेमी था। श्रीपण्डितजीका जीवन इतना अधिक उज्ज्वल था कि स्त्री-वर्गमें भी उनकी निर्बाध गति थी। वे सभीके लिये अति विश्वसनीय थे। यही कारण है कि संभ्रान्त परिवारकी कुल-वधुओंको भी अपना दुःख-दर्द निवेदन करनेमें संकोच नहीं होता था। श्रीपण्डितजीका द्वार सभी स्तरके स्त्री-पुरुषोंके लिये सदा खुला रहता था।

श्रीपण्डितजीकी निस्स्पृहता अद्‌भुत थी। उन्होंने कभी किसीसे कुछ माँगा ही नहीं। वे पूजा-पाठके लिये दक्षिणा कभी ठहराते ही नहीं थे। उनकी अयाचकताका व्रत एक बारके लिये भी कभी खण्डित नहीं हुआ। गाँवके वृद्ध लोग उनकी निरीह एवं निर्लोभी वृत्तिके अनेक प्रसंग सुनाया करते हैं। अयाचकताका कठोर व्रत होते हुए भी उनके गृहस्थ जीवनमें कभी अभाव नहीं रहा। सात्त्विक एवं साधारण जीवन व्यतीत करनेके लिये यजमान लोग स्वतः ही पर्याप्त अन्न-वस्त्र दे दिया करते थे।

पण्डितजीकी संतोंमें बड़ी निष्ठा थी। यही कारण है कि उन सरल श्रद्धालु पण्डितजीके द्वारपर साधु-संतोंका स्वागत-सत्कार प्रायः होता ही रहता था। इसके अतिरिक्त तीर्थ-यात्रामें भी उनकी बड़ी रुचि थी। एक बार उन्होंने पैदल ही श्रीजगन्नाथ धामकी यात्रा की। रेलगाड़ीकी सुविधा थी, इसके बाद भी श्रद्धावशात् पैदल ही गये और पैदल ही वापस आये। यात्रामें उनके साथ उनका एक भतीजा था। गाँवसे पैदल पहले तारकेश्वरनाथ गये और वहाँसे श्रीजगन्नाथ धाम गये। इस पैदल यात्रामें तीन मास लगे।

एक बार अपनी धर्मपत्नीके साथ पण्डितजीने व्रजधामकी यात्रा की। दोनों साथ-साथ श्रीगोवर्धनगिरिकी परिक्रमा लगा रहे थे। परिक्रमा लगाते-लगाते संध्या हो गयी। शरीर भी बहुत श्रान्त हो रहा था। अपनी धर्मपत्नीको सम्बोधित करनेकी उनकी रीति भी अपने ही ढंगकी निराली थी। पण्डितजी 'श्रीराम' कहकर ही अपनी धर्मपत्नीको बुलाया करते थे। पण्डितजीने कहा– श्रीराम! क्यों नहीं यहीं विश्राम किया जाये? सूर्यास्त होनेवाला है और यहाँ पासमें यह छोटी-सी बस्ती है। रातको यहीं विश्राम करके फिर कल प्रातः काल यहाँसे चला जाये।

उनकी धर्मपत्नी अपनी स्वीकृति प्रदान करनेवाली ही थीं, तभी उनको श्रीगोवर्धनगिरिके शिखरपर आकाशमें खड़े हुए भगवान श्रीराधाकृष्ण दिखलायी दिये और वे मधुर स्वरमें कह रहे थे– यहाँ मत रुको, यहाँ मत रुको।

इस संकेतको पाते ही उन्होंने अति विनम्र स्वरमें उनसे कहा– यहाँ रुकना उचित नहीं लग रहा है। आगे बढ़ा जाय। ठहरनेके लिये कोई-न-कोई उपयुक्त स्थान आगे मिलेगा ही।

इस सुझावको पण्डितजीने सहज प्रकारसे स्वीकार कर लिया। श्रीगोवर्धन ग्राम पहुँचनेपर ज्ञात हुआ कि उस बस्तीमें ठहरना वस्तुतः उचित नहीं था। यदा-कदा वहाँ दुर्घटना होती रहती है और वह स्थान निरापद नहीं है।

वृद्धावस्थामें श्रीपण्डितजीकी नेत्र-ज्योति मन्द पड़ गयी थी, अतः पञ्चांगमें तिथि-वार आदि देख पाना सम्भव नहीं था, परंतु उनकी स्मरण-शक्ति बड़ी प्रबल थी। किसी आत्मीयसे वे पञ्चांगके एक मासके वार-तिथि-नक्षत्र आदि सुन लिया करते थे। एक बार सुन लेना ही पर्याप्त था। सुने हुए विवरणके आधारपर श्रीपण्डितजी आये हुए लोगोंको मुहूर्त आदि बतला दिया करते थे।

* * * * *

संक्षिप्त मिश्र वंश वेलि

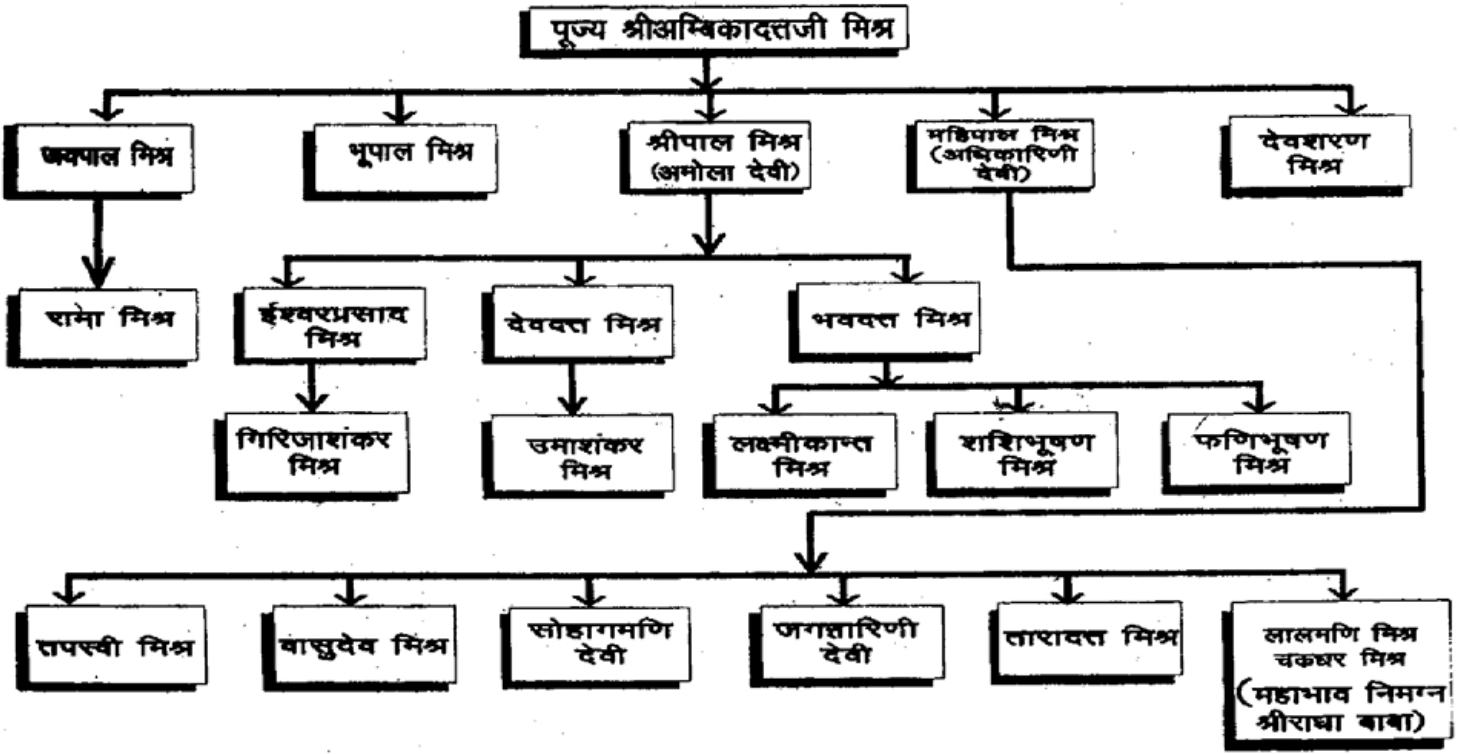

गाँवके राजपरिवारसे घनिष्ठ सम्बन्ध

फखरपुरके मिश्र परिवारका गाँवके जमींदारसे बड़ा घनिष्ठ सम्पर्क रहा था। जमींदार सम्मान्य श्रीगोकुलानन्दजी सिन्हाका उस क्षेत्रमें राजाके जैसा सम्मान था और उनके परिवारको राजपरिवार ही कहा जाता था। इस राजपरिवारमें पं.श्रीमहीपालजी मिश्र पुरोहितके समान समादृत थे। इस राजपरिवारके प्रधान सदस्य सम्मान्य श्रीअविमुक्तेश्वरजी बहादुरसे पं.श्रीमहीपालजी मिश्रके सुपुत्र पं.श्रीतारादत्तजी मिश्रका बड़ा निकटका सम्बन्ध था। पं.श्रीतारादत्तजी मिश्रके सहोदर भाई चक्रधर मिश्रका (जो सिद्धावस्थाको प्राप्त करके श्रीराधा बाबा कहलाये) राजपरिवारमें आना-जाना होने लगा और उन्हें पूर्ण सम्मान दिया जाने लगा। चक्रधर मिश्रका इस राजपरिवारसे बड़ा निकट सम्पर्क रहा और श्रीअविमुक्तेश्वर बहादुर, श्रीरणजीत बहादुर, श्रीरवणेश्वर बहादुर आदिसे बड़ा लगाव था। जमींदारी प्रथाके उन्मूलनसे इस राजपरिवारके वैभवको बड़ा आघात पहुँचा।

* * * * *

आविर्भाव

इन्हीं पं.श्रीमहीपालजी मिश्रकी परम पुण्यमयी सौभाग्यशालिनी धर्मपत्नी पूज्या अधिकारिणी देवीकी कोखसे पौष शुक्ल नवमी सं.१९६९ वि.पौष शुक्ल ९ गुरुवार (१६ जनवरी १९१३) के दिन एक शिशुका फखरपुर ग्राममें जन्म हुआ, वही भविष्यमें श्रीराधा बाबाके नामसे विख्यात हुआ। आश्चर्य और आनन्दकी बात यह कि जन्मके समय माँको प्रसव वेदना नगण्य रूपमें हुई। मेष राशिमें जन्म होनेके कारण नवजात शिशुका नाम रखा गया लालमणि, किन्तु प्रचलित नाम हुआ चक्रधर मिश्र। चक्रधर कुल चार भाई थे। चारोंमें सबसे छोटे चक्रधर ही। अन्य भाइयोंके नाम हैं श्रीतपस्वी मिश्र, श्रीवासुदेव मिश्र और श्रीतारादत्त मिश्र। चक्रधरके दो सहोदरा बहिनें भी थीं।

जन्म-पत्रिका

चक्रधर (बाबा)ने संन्यास लेनेके बाद अपनी जन्मपत्री फाड़कर फेंक दी थी। जन्मपत्रीके अभावमें जन्म-तिथिको निर्धारित करनेमें गोरखपुर विश्वविद्यालयके विद्वान आदरणीय श्रीविश्वम्भरशरणजी पाठकको बड़ा परिश्रम करना पड़ा। चक्रधर (बाबा) के बड़े भाईसे, फखरपुर ग्रामके लोगोंसे तथा अनेक विशिष्ट व्यक्तियोंसे मिलकर बात करनेके बाद जो तथ्य प्राप्त हुए, उन तथ्योंका ज्योतिष शास्त्रकी दृष्टिसे विवेचन एवं गणना करनेपर श्रीपाठकजीने यही निश्चित किया कि सं. १९६९ वि. पौष शुक्ल नौमी गुरुवार तदनुसार १६ जनवरी १९१३ ई. चक्रधर (बाबा)की जन्मतिथि है।

फिर देखनेको मिल गया हस्तलिखित 'यति-शतकम्' संस्कृत काव्य, जो बाबाके बड़े चचेरे भाई पं.श्रीदेवदत्तजी मिश्र द्वारा बहुत वर्ष पहले लिखा गया था। यह सारा काव्य बाबापर ही रचित है। इस काव्यमें भी वही जन्मतिथि दी हुई है, जो श्रीपाठकजीने विवेचनोपरान्त निर्धारित किया है। इसके बाद भी यहाँ-वहाँसे जितने भी विविध प्रकारके संकेत-सूत्र मिल पाये, उन्हींको आधार मानकर उनपर कई वर्षोंतक परस्परमें गम्भीर चिन्तन और मनन होता रहा। सुदीर्घ कालतक विचार एवं विवेचनके उपरान्त सम्मान्य भाई श्रीरामगोपालजी पालड़ीवाल बाबाके जन्मसे सम्बन्धित जिन तथ्योंकी स्थापना कर पाये, उसीको संक्षिप्त रूपमें नीचे दिया जा रहा है।

१—	प्रचलित नाम	चक्रधर मिश्र
२—	पिताका नाम	पं.श्रीमहीपाल मिश्र
३—	लिंग	पुरुष
४—	जन्मराशिका नाम	लालमणि मिश्र (काशी पञ्चांगानुसार)
५—	लहरीके अनुसार	'चो' अक्षरपर अश्विनी तृतीय चरण
६—	जन्म स्थान	ग्राम फखरपुर (अरवल), जिला गया, बिहार। अरवलसे ३-३.३० किलोमीटर पूरब दिशामें फखरपुर
७—	अरवल	क- अक्षांश २५°-१६' उत्तर ख- देशान्तर ८४°-४१' पूर्व
८—	समयका अन्तर	+८' ४४'', S.D.(-) 02''
९—	सूर्योदय	६-४७'-३६'' (स्थानीय समयके अनुसार)
१०—	सूर्यास्त	१७-३२'-१२'' (स्थानीय समयके अनुसार)

११—	दिनमान	१०-४४'-३६''
१२—	गर्भ कुण्डलीसे संशोधित जन्म समय	क- भारतीय स्टैण्डर्ड समयके अनुसार १०-५४'-२२''
		ख- स्थानीय समयके अनुसार ११-३'-०६''
१३—	जन्मतिथि	सं. १९६९ वि., पौष शुक्ल ९, गुरुवार तदनुसार १६ जनवरी १९१३

जन्मांग चक्र

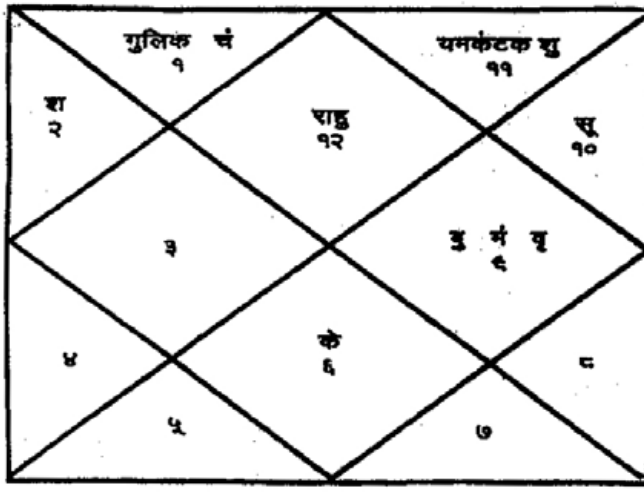

१— आयु एवं स्वास्थ्य विचार

आयुका विचार करते समय जैमिनीय मतसे आयु-कक्षाका विचार होता है और पराशर मतसे मारक और मारकेशका विचार किया जाता है। कुण्डलीमें बुध, शनि और शुक्र अनिष्ट ग्रह होनेके कारण मारक हैं। शुक्रपर शनिकी दृष्टि है, इसलिये पाराशर मतके अनुसार शुक्रकी मारकता-शक्ति शनिमें संक्रमित हो जाती है।

मारकैः सह सम्बन्धान्निहन्ता पापकृच्छनिः।
अतिक्रम्येतरान् सर्वान् भवत्येव न संशयः॥

पराशर-उडुदाय प्रदीप

कुण्डलीके अनुसार शनिकी मारकता सर्वाधिक प्रबल है। दीर्घायु होते हुए भी शनिकी दशामें मारक योग होनेसे लगभग अस्सी वर्षकी अवस्थामें आयुके पूर्ण हो जानेकी सम्भावना है। लग्नेश वृहस्पति अपने घरमें है, अतः स्वास्थ्यकी शिथिलताके पर्याप्त संकेतोंके होते हुए भी आयुर्बल विशद है।

२- विवाह एवं सन्तान योग

पुरुषकी कुण्डलीमें शुक्र स्त्रीकारक ग्रह होता है, अतः शुक्रकी महादशामें विवाह हो जानेकी पूर्ण सम्भावना है। सन्तान भावपर शनि, सूर्य और मंगलकी पूर्ण दृष्टि है। पञ्चममें वरुणकी स्थिति है और पञ्चमेश तृतीयमें है। यह स्थिति सन्तान हीनताको द्योतित करती है।

३- विद्या एवं सद्गुण विचार

मंगल, बुध और वृहस्पति एक राशिमें स्थित हैं और इनमें वृहस्पति स्वग्रही है। यह प्रबल राजयोग है।

क्षमापालकः स्वीयकुले नरः स्यात्
कवित्वसंगीत कलाप्रवीणः।
परार्थ संसाधकतैक चित्तो
वाचस्पतिज्ञाबनिसूनुयोगे।।

जातकाभरणम्

कुण्डलीके अनुसार उदारता, मानवीयता, सच्चरित्रता, काव्यपटुता संगीतकला प्रवीणता, सुकीर्ति आदिका स्पृहणीय योग है।

४- कीर्ति विचार

पाराशरके अनुसार लग्नेश दशमेश, गुरु दशमस्थ हो तो वह प्रचुर कीर्ति प्रदान करता है और यह योग कुण्डलीमें है।

'लग्नेशे केन्द्रभावस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत्।'
'लग्नस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसंयुते।'

५- राजदण्ड विचार

लग्नसे द्वितीय और द्वादश भावमें लगभग समान बलशाली एक-एक ग्रह है और यह योग राजदण्ड-भोगकी ओर संकेत करता है।

६- धर्म भाव विचार

धर्म-भावका स्वामी मंगल ग्रह वृहस्पतिके साथ दशम भावमें है। यद्यपि धर्म भावपर शनिकी दृष्टि है, किन्तु उच्चाभिलाषी भाग्येशपर वृहस्पतिका पूर्ण प्रभाव है और एक अन्य शुभ ग्रह बुधके साथ होनेसे उसमें और अधिक विशिष्टता आ गयी है। बुध और वृहस्पति दोनों क्रमशः विद्या और बुद्धिका विधान करनेवाले ग्रह हैं और ये सदा शुभ कर्मोंमें प्रवृत्त करते रहते हैं। निश्चय ही कुण्डलीका स्वामी प्रखर धार्मिक होगा और अपनी साधनाके मार्गपर अबाध रूपसे प्रगति करते हुए उच्च-से-उच्च सोपानोंको पार करनेमें समर्थ रहेगा।

७- प्रव्रज्या एवं हंस योग

चलित चक्रके अनुसार सूर्य, मंगल, बुध और वृहस्पति, इन चार ग्रहोंका दशम भावमें योग होना संन्यासका सूचक है।

ग्रहैश्चतुर्भिर्यदि　　पञ्चभिर्वा
षड्भिस्तथैकालयसंस्थितैश्च।
नश्यन्ति सर्वे खलु राजयोगाः
प्राव्राजिको योग इति प्रदिष्टः॥

— ढुण्ढिराज-जातकाभरणम्

चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्या बलिभिः समाः।
रव्यादिभिस्तपस्वी च कपाली रक्तवस्त्रभृत्॥

— वृहत्पाराशर होरा शास्त्र

मंत्रेश्वरने अपनी प्रौढ़ रचना फल दीपिकामें लिखा है कि चार ग्रह, जिनमें दशमेश भी हो, केन्द्र या त्रिकोणमें स्थित हों तो व्यक्ति संन्यासी होता है। ज्योतिषके अध्येता जानते हैं कि केन्द्रादि संख्या भावोंकी होती है।

धनुष राशिका वृहस्पति केन्द्र (दशम भाव) में स्थित होकर हंसयोग बना रहा है। ज्योतिषके पंच-महापुरुष-योगोंमें एक योग हंस-योग भी है। यह हंस-योग साधनामें महान सिद्धि प्रदान करनेवाला है।

* * * * *

शैशव

शिशु अवस्थामें चक्रधर बहुत ही खूबसूरत और स्वस्थ था। उसके अंगका सुन्दर गौर वर्ण सबको लुभा लेता था। रोनी प्रकृतिका नहीं होनेके कारण उसकी शिशु-सुलभ चेष्टाएँ सभीको बड़ी प्यारी लगती थी। कुछ बड़ा होनेपर चक्रधर घरमें और घरके बाहर प्रायः खेलता रहता था।

जब उसकी आयु एक सालकी हुई तो कभी-कभी हाथमें एक छोटी-सी छड़ी लिये हुए वह आता और घरकी बड़ी महिलाओं या बहिनको खेल-खेलमें मार दिया करता था। वह सम वयस्क बच्चोंसे झगड़ा भी कर लिया करता था।

पण्डितजीके घरपर गाय थी और घरकी महिलाएँ ही दुह लेती थी। जब घरकी महिलाएँ गाय दुहती थी तो चक्रधर लाड़-लाड़में उनकी पीठपर चढ़ जाया करता था। उसको पीठपर लिये-लिये महिलाएँ दूध दुहती रहती थी। दही मथते समय तो चक्रधर माखनके लिये मचल जाया करता था। कई बार वह मथानी पकड़कर लटक जाता था। जब माखन दे दिया जाता, तब उसकी मचलन शान्त होती। उसकी यह मचलन भी सबको प्यारी लगती।

* * *

चक्रधर जब चार वर्षका था, तब उनकी जन्मदात्री माँने चक्रधरको नारी- आकृतिवाला एक धातु-खण्ड दिया था। यह आरतीका खण्डित हत्था था। उस हत्थेकी आकृति नारीके समान थी। उस धातु-खण्डको देकर माँने चक्रधरसे कहा था कि यह गोपी है, तुम इसकी पूजा किया करो। माँके कथनानुसार चक्रधर उस धातु-मूर्तिकी पूजा करने लगा। जो नये-पुराने कपड़े घरमें मिल जाते, उन्हें ही चक्रधर उस मूर्तिपर लपेट देता और घरमें जो खाने-पीनेको मिलता, उसीका भोग लगाता।

वह पूजा थी अपनी बाल-मतिके अनुसार और वह भी घरवालोंके कार्योंकी नकल करते हुए। अब कहनेके लिये यह कह दिया जा सकता है कि गोपी-भावकी साधनाका आरम्भ चक्रधरका चार वर्षकी आयुमें हो गया था, पर बाल्यकालकी वह साधना किसी रसोपासना-परक- प्रबोधपर आधारित थी ही नहीं। बचपनमें चक्रधर घरवालोंकी देखा-देखी पूजा किया करता था। पूजा करते समय चक्रधर स्वयंको पाञ्चभौतिक स्थूल-देहमें

अध्यस्त बालक ही मानता था, गोपी-स्वरूपा बालिका नहीं।

जब चक्रधरकी आयु आयु चार-पाँच वर्षकी रही होगी, तब वह भाई-बहिनोंके साथ तथा गाँवके बच्चोंके साथ अपने घरके आँगनमें खेल रहा था। उसी समय एक साधु घरके द्वारपर भिक्षा माँगनेके लिये आये। जन्मदात्री माँको साधु-सेवामें बड़ा उत्साह रहा करता था। गाँवमें उसकी साधु-सेवा-परायणताकी बात विख्यात थी और गाँवमें यदि कोई साधु-संत आते तो लोग उनको प्रायः पण्डितजीके घरपर भेज दिया करते थे।

बच्चोंके खेलते समय जो साधु द्वारपर भिक्षा माँगने आये थे, वे बड़े तेजस्वी थे। उनके मुख-मण्डलपर बड़ी कान्ति थी। वे द्वारपर खड़े होकर एकटक चक्रधरकी ओर देखने लगे। थोड़ी देर बाद भिक्षा मिल जानेपर वे चले गये। उनके उस दृष्टि-पातका चक्रधरपर विलक्षण प्रभाव पड़ा। यही कहना चाहिये कि दृष्टि-पातके माध्यमसे उन्होंने शक्ति-पात ही किया। उन तेजस्वी साधुके चले जानेके बाद चक्रधर खेलना छोड़ करके बाहर आकर घरके द्वारपर आसन लगाकर बैठ गया तथा अपनी आँखें बन्द करके लगातार 'राम-राम- राम-राम' बोल-बोलकर जपने लगा। आँखें तो बन्द थीं ही, आँसूकी धारा कपोलोंपर अविरल बह रही थी। घरवाले घबराये कि इस बालकको क्या हो गया है? घरवालोंका चिन्तित होना स्वाभाविक था, पर चक्रधर अपनी सुध-बुध खोये हुए निरन्तर जप कर रहा था। थोड़ी देर बाद भावके शमित होनेपर वह प्रकृतिस्थ हुआ। उन महासिद्ध साधुने अपना पावन दर्शन देकर तथा कोमल-हृदय बालकपर अमोघ दृष्टि डालकर उसके जीवनमें आध्यात्मिकताके बीजका वपन कर दिया, जिसके शुभ परिणाम भविष्यमें देखनेको मिले।

* * *

चक्रधरको बचपनमें पाठशाला जाना अच्छा नहीं लगता था। वह पाठशाला जानेसे बचना चाहता था, पर बच नहीं पाता था। घरवाले ज्यों-त्यों करके उसे भेज ही देते थे। चक्रधरको एक उपाय सूझा कि यदि भूत-ग्रस्त होनेका स्वाँग रचा जाय तो शायद पाठशाला जानेसे बचाव हो जाय। चक्रधरने कई बार देखा था कि भूत-ग्रस्त व्यक्ति किस प्रकारसे चेष्टा किया करता है। पाठशालामें प्रतिदिन प्रार्थना होती थी। ज्यों ही यह प्रार्थना समाप्त हुई कि चक्रधरने वैसी ही चेष्टाएँ करनी आरम्भ कर दी।

स्वाँग सही उतरा। लोग और लड़के चक्रधरको घर ले आये। उसने अपने मुँहसे बनावटी फैन निकालना आरम्भ कर दिया। माँ घबरा गयी। कुछ उपचार किया गया और चक्रधर स्वस्थ हो गया। माँने कहा कि लड़का पाठशाला नहीं जायेगा। पाठशाला जाना बन्द हो गया, पर यह ढंग थोड़े दिन ही रहा। पुनः पाठशाला जाना आरम्भ करना पड़ा।

* * *

चक्रधरके मनमें श्रीरामलीला देखनेका बड़ा चाव रहा करता था। आश्विन मासके शुक्ल पक्षमें श्रीविजयादशमी पर्व आया करता है। इस अवसरपर गाँवके बाहर श्रीरामलीला हुआ करती थी। बाल-आग्रहको देखकर बड़े भाई श्रीतारादत्तजी चक्रधरको श्रीरामलीला दिखलानेके लिये ले जाया करते थे। देखते-देखते बालक चक्रधर कभी-कभी सो जाया करता था। तब श्रीतारादत्तजी श्रीरामलीलाके मेलेसे अपने कन्धेपर उठाकर उसे घर लाया करते थे।

* * *

एक बार चक्रधर घरकी महिलाओं और अपनी माताजीके साथ श्रीरामलीला देखनेके लिये गया। लीला देखकर वह लौट रहा था।

मेलेकी ओर जानेवाले रास्तेके दोनों तरफ मिठाई, फल, खिलौनें और अन्य उपयोगी चीजोंकी दुकानें लगी हुई थी। एक व्यक्ति रास्तेके किनारे जमीनपर कपड़ा फैलाकर और उस कपड़ेपर कापी, किताब, रबड़, पेन्सिल रखकर बेच रहा था। चक्रधरको रबड़-पेन्सिलकी जरूरत थी। उसने बेचनेके लिये कपड़ेपर रखी हुई रबड़-पेन्सिल देख ली थी, पर उसके मनमें यह भी बात थी कि मैं अपने मुँहसे इसके लिये नहीं कहूँगा। मैं भगवानसे प्रार्थना करूँगा और वे जरूर मुझे किसी प्रकार दिलवा देंगे।

चक्रधरने मन-ही-मन भगवानसे प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी कि मुझे एक रबड़ और एक पेन्सिल चाहिये। उसी समय पूज्या माँने अपने पुत्र चक्रधरसे कहा— अरे! देख! यह आदमी रबड़-पेन्सिल बेच रहा है। तुम लोगे?

चक्रधरके चेहरेपर प्रसन्नताके भावको देखकर माँने उसे रबड़-पेन्सिल खरीदकर दे दिया।

बाल-मानसकी भगवदास्था, प्रभु-प्रार्थना एवं भगवदाश्रयका यह एक स्मरणीय प्रसंग है।

बाल्य-काल में श्रीशिव-भक्ति

सन् १९२० ई. की बात है। तब चक्रधरकी आयु सात वर्षकी थी। वह सरकारी पाठशालामें पढ़ने जाया करता था। पाठशालामें एक पीरियड (घंटा) ड्रिल (शारीरिक व्यायाम) का हुआ करता था। पीरियडमें पाठशालाके विद्यार्थी एक पंक्तिमें खड़े करवाये जाते थे। पंक्तिबद्ध विद्यार्थियोंसे मार्च (प्रचलन) भी करवाया जाता था। बहुत बड़ी-बड़ी आयुके विद्यार्थी पंक्तिमें खड़े होते थे। ऊँचाईकी दृष्टिसे चक्रधर लगभग सबसे छोटा था और प्रायः पंक्तिके अन्तिम छोरपर उसको खड़ा होना पड़ता था। उस समय वह धोती पहना करता था। उसकी धोती ढीली-ढाली रहा करती थी। मार्च करते समय धोतीकी सँभाल ठीकसे रह नहीं पाती थी। ड्रिल-मास्टर साहब प्रायः कहा करते थे— अरे हे पण्डित! अपनी धोती सँभालो।

ड्रिल-मास्टर साहबके कहनेपर वह कुछ तो अपनी धोती सँभालता था और कुछ अपने हाथसे धोतीको पकड़े-पकड़े ड्रिल करते रहता था।

एक बार पाठशालामें खेल-प्रतियोगिता हुई। ऊँची कूद (High Jump) लम्बी कूद (Long-Jump) दौड़ (Race) आदि-आदि अनेक प्रतियोगिताओंमें चक्रधरने अपना नाम लिखवाया, परंतु प्रत्येक बार उसे असफलता मिली। पाठशालामें बड़ी-बड़ी आयुके विद्यार्थी थे, जिनके शरीरकी ऊँचाई और शरिरिकी शक्ति चक्रधरसे बहुत अधिक थी। उन लम्बे-तगड़े विद्यार्थियोंके समक्ष वह भला कैसे सफल हो सकता था? उन सफल विद्यार्थियोंकी छातीपर जब तगमा (Medal) बाँधा जाता था तो उसे देखकर चक्रधरके मनमें यह बात बार-बार उठा करती थी कि क्या एक तगमा मुझे नहीं मिल सकता। सोनेका पानी चढ़ा हुआ तगमा नीले-नीले फीतेके ऊपर बड़ा चमकता। चमकते तगमेको देखकर चक्रधरका मन बड़ा प्रलुब्ध और आकृष्ट होता था, किन्तु मात्र चाहनेसे तो बात बननेवाली नहीं थी। यह तगमा तो तभी मिल सकता था, जब वे किसी प्रतियोगितामें सफल हों।

बाल्यावस्था होते हुए भी चक्रधरकी भगवान श्रीशिवजीमें बड़ी आस्था थी। वह बहुत देरतक भगवान श्रीशिवजीसे विनती करता रहा। यों ही नहीं, बड़े करुणार्द्र मनसे विनती हो रही थी। उसका सहज विश्वास था कि

भगवान शिव मेरी विनती अवश्य सुनेंगे और मेरी मनोकामना अवश्य पूर्ण होगी। विनती करते-करते उसके मनमें एक आवाज उठी— तुम गीत सुनावो, तुम गीत सुनावो।

चक्रधरको भगवान शिव दिखलायी नहीं दिये, पर उसे यह जँचने लगा कि भगवान शिव ही गीत सुनानेके लिये आदेश दे रहे हैं। वह अपनी बड़ी भाभीजीके पास गया और कहने लगा— ऐ भाभी! ऐ भाभी!! तू मुझे एक गीत सिखा दे।

भाभीजीने कहा— गीत तो स्त्रियाँ गाया करती हैं, तुम्हें गीतसे क्या मतलब? तुम गीत सीखकर क्या करोगे?

उसने कहा— यह सब तू मत पूछ। बस, तू मुझे एक गीत सिखा दे।

चक्रधरके आग्रहको देखकर भाभीजीने कहा— उस 'स्त्री-धर्म-शिक्षा' पत्रिकामें दो गीत हैं, उनको याद कर लो।

भाभीजी 'स्त्री-धर्म-शिक्षा' नामक पत्रिका मँगवाया करती थीं। भाभीजीने पत्रिकाका वह अंक दे दिया, जिसमें वे दो गीत थे। उसने इन दोनों गीतोंको कण्ठस्थ कर लिया।

अगले दिन पाठशालामें विद्यार्थियोंकी सभा होनेवाली थी। इसी सभामें प्रतियोगितामें सफल विद्यार्थियोंको पारितोषिक मिलनेवाला था। चक्रधरने सोचा था कि जब विद्यार्थियोंकी सभा होगी, तब गीत सुनाऊँगा। वह बहुत पीछे बैठा था। उसके मनमें गीत सुनानेकी भावना बार-बार उठ रही थी, पर वह अपनी भावनाको व्यक्त करनेके लिये साहस नहीं कर पा रहा था। पाठशालाके प्रधानाचार्य श्रीविद्यानन्द सिंहजी सभाका संचालन कर रहे थे। वे सेना-विभागसे आये हुए व्यक्ति थे। सभाके सामने टेबुलपर अँगरेज सम्राट जार्ज पंचमका एक बड़ा चित्र रखा हुआ था। चक्रधरने खड़े होकर और बड़ा साहस बटोरकर धीरेसे कहा— महाशय! मैं एक गीत सुनाना चाहता हूँ।

सभाके एक दम आगे श्रीप्रधानाचार्य और सभाके एकदम पीछे चक्रधर। श्रीप्रधानाचार्यजी और चक्रधरके बीचमें जितनी दूरी थी और चक्रधरने जितने धीरेसे कहा था, उसे देखते हुए उनकी मन्द आवाज दूर-स्थित श्रीप्रधानाचार्यजीतक पहुँचनी ही नहीं चाहिये थी, पर सच्ची बात

सफलता और प्रसन्नतासे माँके हृदयके आनन्दकी सीमा नहीं थी।

* * *

एक अन्य प्रसंग छात्र-वृत्तिको लेकर है। सरकारकी ओरसे श्रेष्ठ विद्यार्थीको छात्र-वृत्ति मिलनेवाली थी। श्रेष्ठ विद्यार्थी वही कहलाता था, जो परीक्षामें सर्वाधिक अंक प्राप्त करे। चक्रधर छात्र-वृत्ति पाना चाहता था, पर उनके लिये समस्या यह थी कि गणितमें किस प्रकार बात बन पायेगी। गणित उसका अत्यधिक कमजोर विषय था। उसने फिर भगवान शिवसे प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी। प्रार्थना करते-करते उसके मनमें एक बात स्फुरित हुई— अपने बड़े भाईसे गणितके दस-बारह प्रश्न मैं पूछ लूँ। वे जिन प्रश्नोंको उत्तर सहित बता देंगे, उनको मैं रट लूँगा। यदि वे ही प्रश्न परीक्षामें आ गये, फिर तो कहना ही क्या है?

चक्रधरने अपने बड़े भाईसे कहा। उन्होंने नौ-दस सालके प्रश्न-पत्र अपने हाथमें लिये। सभी प्रश्नपत्रोंको देखकर और अपने अनुभवके आधारपर उन्होंने बारह प्रश्नोंको चुन लिया और उन प्रश्नोंको हल करके चक्रधरको दे दिया। वे बारहों प्रश्न उत्तर सहित उसने रट लिये। अब क्या ही आश्चर्यकी बात! जो-जो प्रश्न उसने रटे थे, वे सब-के-सब ज्यों-के-त्यों प्रश्न-पत्रमें थे। उसके हर्षकी सीमा नहीं थी। उसने सारे प्रश्न हल कर दिये। परीक्षामें चक्रधर पूर्ण सफल रहा और सरकारकी ओरसे उसे छात्र-वृत्ति मिली। इस घटनाने उसकी शिव-भक्तिको और भी परिपुष्ट कर दिया।

* * *

पहले पाठशालामें कक्षाएँ 'ए', 'बी', 'सी', के नामसे हुआ करती थीं। कक्षा 'सी' में उत्तीर्ण होकर कक्षा 'बी' में जाना होता था और फिर कक्षा 'बी' से कक्षा 'ए' में। गणित छोड़कर अन्य सभी विषयोंमें चक्रधर बड़ा अच्छा था। सभी विषयोंमें वह बड़े अच्छे अंक लाता था। बस, गणितमें अत्यधिक कमजोर होनेके कारण अनुत्तीर्ण रहता था। भले गणितमें अनुत्तीर्ण होता, पर अन्य विषयोंमें अच्छे अंकोंसे उत्तीर्ण होनेके कारण पाठशालाके प्रधानाध्यापक चक्रधरको प्रोन्नति देकर अगली कक्षामें चढ़ा देते थे। अब पाठशालाकी अन्तिम कक्षामें उत्तीर्ण होनेके लिये सभी विषयोंमें

यह है कि इस सारे खेलका संचालन तो भगवान शिव कर रहे थे। प्रकृत धरातलपर जो सम्भव नहीं था, वह सम्भव हुआ और उसकी आवाज श्रीप्रधानाचार्यजीने सुन ली। तुरंत उन्होंने पूछा– क्या तुम गीत गाना चाहते हो?

चक्रधरने अपना हाथ उठाकर कहा– हाँ।

श्रीप्रधानाचार्यजीने चक्रधरको आगे बुलाया। ज्यों ही चक्रधर आगे गया, त्यों ही उन्होंने उन्हें उठाकर उसी टेबुलपर खड़ा कर दिया, जिसपर सम्राट जार्ज पंचमका चित्र था। चक्रधर एक छोटी कदका विद्यार्थी था, वह सभीको अच्छी प्रकारसे दिखलायी दे सके, इसीलिये उसको टेबुलपर खड़ा किया गया था। टेबुलपर खड़े-खड़े चक्रधरने गाना आरम्भ किया–

'सुधि लीजै प्रभु, क्यों बिसारा हमें।'

उस गीतकी प्रथम पंक्ति यही थी। चक्रधरने दादरा तालमें यह सारा गीत गाया। इस समय गीत चक्रधर नहीं गा रहा था, अपितु चक्रधरके कण्ठके माध्यमसे भगवान शिव गा रहे थे। सभाका सारा वातावरण गीतकी स्वर लहरीसे गुञ्जित हो उठा। सारे विद्यार्थियों-अध्यापकोंका मन स्वर-लहरीमें लहरा रहा था। गीत सुनकर श्रीप्रधानाचार्यजीका हृदय भर आया। गीतके समाप्त होते ही उन्होंने खड़े होकर तुरन्त घोषणा कर दी– पारितोषिक-वितरणका कार्यक्रम आरम्भ होनेके पहले ही मैं इस बालकको संगीत-पुरस्कार प्रदान कर रहा हूँ।

यह घोषणा करके उन्होंने तत्क्षण एक सुन्दर तगमा चक्रधरकी कमीजपर लगा दिया। अपनी कमीजसे लटकते तगमेको देखकर बालक चक्रधरकी प्रसन्नताकी सीमा नहीं थी। चक्रधरका मन कृतज्ञतासे भर आया तथा वह मन-ही-मन भगवान शिवसे कहने लगा– आपने मेरी विनती सुन ली और मेरा मनोरथ पूर्ण कर दिया।

संगीतका पुरस्कार दे चुकनेके बाद श्रीप्रधानाचार्यजीने पूछा– क्या और भी कोई गीत आता है?

चक्रधरने कहा– एक और आता है।

फिर उसने वह दूसरा गीत भी सुनाया, जो उसने याद किया था। सभाके बाद सहपाठियोंसे चक्रधरको बहुत सराहना मिली, बहुत साधुवाद मिला। घरपर आकर चक्रधरने वह तगमा अपनी माँको दिखलाया। पुत्रकी

कम-से-कम ३३ प्रतिशत अंक लाना आवश्यक था। चक्रधरको लगा कि मैं अब अवश्य ही अनुत्तीर्ण कर दिया जाऊँगा। उस भगवान शिवसे प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी कि गणितमें मेरे कम-से-कम ३३ प्रतिशत अंक अवश्य आ जायें। भगवान शिवने उसकी प्रार्थना सुन ली। यह तो पता नहीं कि बात कैसे बनी, पर परीक्षामें गणितके अन्दर ३३ प्रतिशत अंक मिल गये और चक्रधरको उत्तीर्ण घोषित कर दिया गया। इससे चक्रधरका भगवान शिवपर विश्वास और भी अधिक बढ़ गया।

* * *

सन् १९२४ की बात है। गाँवमें एक कथावाचकजी आये। कथाके प्रवाहमें 'सादर सिव कहुँ सीस चढ़ाए। एक एक के कोटिन्ह पाए।।' चौपाईका विस्तार करते हुए श्रीकथावाचकजीने बड़े रोचक ढंगसे लंकाधिपति रावणकी शिवोपासनाका वर्णन किया। इस कथाको बालक चक्रधर भी सुन रहा था। कथासे उसको भगवान शिवकी अर्चना करनेकी प्रेरणा मिली और उसने भगवान शिवकी उपासना करनेका संकल्प किया। कथामें उसने सुना था कि रावणने अपने शीश काटकर भगवान शिवपर चढ़ाये थे, उसीके आधारपर वह मन-ही-मन विचार करने लगा— रावणके समान मैं अपना मस्तक काटकर भगवान शिवपर चढ़ाऊँ, यह मेरे द्वारा सम्भव है नहीं, फिर क्या किया जाये? मैं अपना मस्तक तो नहीं चढ़ा सकता, पर प्रतिदिन एक बूँद रक्त तो चढ़ा ही सकता हूँ। मस्तक चढ़ानेमें तो जीवनके अस्तित्वका प्रश्न है, पर यह समस्या रक्तार्पण करनेमें नहीं है।

अब वह सोचने लगा कि प्रतिदिन एक बूँद रक्तको चढ़ानेके लिये क्या प्रक्रिया अपनायी जाये। घरके आँगनमें एक शिवलिंग प्रतिष्ठित है ही, इन्हीं शिवलिंगपर रक्त-बिन्दु चढ़ानेके लिये चक्रधर अपने गाँवके राजा साहबके घरके एक व्यक्तिसे नया ब्लेड माँगकर ले आया। ब्लेडसे अपनी अँगुलीका अग्रभाग तनिक-सा चीरकर उसने रक्तकी एक-दो बूँदको उस शिवलिंगके मस्तकपर अर्पित कर दिया।

दूसरे दिन नित्य नियमके अनुसार जब चक्रधरके बड़े भाई शिवार्चन करने लगे तो देखा कि भगवान शिवके मस्तकपर एक लाल धब्बा है। जब वह सहज ही दूर नहीं हुआ तो उन्होंने यह अनुमान लगा लिया कि यह

तो रक्त-बिन्दु है। रक्त-बिन्दुका निश्चय होते ही उनका मन अत्यधिक खिन्न हो गया। उनका मन अनेक प्रकारके अशुभ भावोंसे भर गया। इस रक्तबिन्दुको वे अशुभका सूचक मानने लगे। ब्राह्मण-परिवार, फिर वैष्णवी निष्ठा और फिर पुरोहिती वृत्ति, सारा कुछ सात्त्विक, परम सात्त्विक, फिर इस असात्त्विकताने घरमें कैसे प्रवेश पा लिया। यह किसकी करतूत है, जिसने भगवान शिवके मस्तकपर रक्त चढ़ाया? बड़े भाईने उस लाल धब्बेको अच्छी प्रकार स्वच्छ करके भगवान शिवसे क्षमा-याचना करते हुए सविधि पूजा की।

अगले दिन फिर चक्रधरने चोरीसे चुपचाप भगवान शिवके मस्तकपर रक्त-बिन्दु चढ़ाया। उसे तो शिवभक्त रावणके अनुकरणपर शिवोपासनाका बड़ा चाव उमड़ा हुआ था और अपने निश्चयानुसार कार्य करके वह मन-ही-मन बड़ा प्रसन्न हो रहा था। फिर अगले दिन परम वन्दनीय नित्याराध्य शिवलिंगपर रक्त-बिन्दुको देखकर बड़े भाईको बड़ा दुःख हुआ। वे समझ नहीं पा रहे थे कि वह कौन व्यक्ति है, जो ऐसा दुस्साहस कर जाता है। वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि इसको करनेवाला मेरा छोटा भाई चक्रधर ही है। बड़े भाईने बड़े दुखित मनसे उस रक्त-बिन्दुको पुनः स्वच्छ करके क्षमा-याचना करते हुए भगवान शिवकी पूजा की।

यही बात फिर तीसरे दिन हुई। अब तो बड़े भाईके क्षोभकी सीमा नहीं थी। बड़े भाई बहुत झल्लाये तथा क्षुब्ध वाणीमें घरके लोगोंके सामने अपनी कष्टप्रद खिन्नता व्यक्त करने लगे। किसी अनिष्टकी आशंकासे घरके सभी लोग बड़े विषण्ण थे। किसी भावी अमंगलकी आशंकासे सभीका मन आक्रान्त हो गया।

बड़े भाई किसी कामसे राजा साहबके घर गये थे और वहाँ भी इस रक्त-बिन्दुकी चर्चा करने लगे। वहाँपर वह व्यक्ति भी बैठा था, जिसने चक्रधरको नया ब्लेड दिया था। ब्लेड देनेकी बात याद आते ही उसने बड़े भाईसे कहा— आजसे तीन-चार दिन पहले आपका छोटा भाई चक्रधर मुझसे नया ब्लेड ले गया था, कहीं ऐसा नहीं कि उसीने यह सब किया हो।

घरपर आकर बड़े भाईने चक्रधरसे पूछा— तुम राजा साहबके घरसे

ब्लेड ले आये थे क्या?

उनके द्वारा 'हाँ' कहे जानेपर बड़े भाई उनकी अँगुलियाँ देखने लगे। अँगुलियोंमें चीरे जानेका चिह्न था ही। बड़े भाईका अनुमान सही निकला और वे बहुत फटकारते हुए चक्रधरको धमकाने लगे। बालक तो था ही, अतः डाँट-फटकारसे चक्रधर बहुत अधिक भयभीत हो उठा। बड़े भाईके तीव्र स्वरको सुनकर माँ तत्काल वहाँ आ गयी। आते ही माँने कहा— इसे क्यों तंग करते हो?

बड़े भाई बहुत मातृ-भक्त थे। माँके ऐसा कहते ही वे चुप हो गये और सारी बात शान्त हो गयी, परंतु चक्रधरके मनमें तो शिव-भक्ति बहुत उमड़ रही थी। बात खुल चुकी थी, अतः अब भगवान शिवके मस्तकपर रक्त-बिन्दु चढ़ाया जा सकना सम्भव नहीं था। चक्रधरने सुन रखा था कि भगवान शिवको श्मशान- भूमिकी चिता-भस्म बड़ी प्रिय है, फिर क्यों न चिता-भस्म ही चढ़ायी जाये। सबसे बड़ी समस्या यह थी कि यह चिता-भस्म कैसे प्राप्त हो? चक्रधरका मन अब चिता-भस्मकी प्राप्तिका उपाय सोचने लगा।

एक दिन उन्होंने देखा कि कुछ लोग शवको अर्थीपर ले जा रहे हैं। पाठशालाकी छुट्टी होनेवाली थी। चक्रधर अर्थीको ले जानेवालोंके साथ हो लिया। साथ जानेका प्रयोजन मात्र इतना ही था कि वह स्थान देख लिया जाये, जहाँ शवको जलाया जायेगा। उस स्थानको देखकर ये भागते हुए घर आ गया, जिससे घरपर पहुँचनेमें देरी न हो। आनेमें बड़ी शीघ्रता की, फिर भी देरी हो ही गयी। माँने विलम्बका कारण पूछा तो चक्रधरने इधर-उधरकी कुछ बातें बनाकर माँको भुलावा दे दिया।

दूसरे दिन वे अकेले ही उस स्थानकी ओर चल दिया, जहाँ शव-दाह हुआ था। चक्रधरका मन बहुत अधिक डरा हुआ था। वे यही सोच रहे था— श्मशानभूमिमें तो भूत-प्रेतका वास रहता है। मैं जा तो रहा हूँ, पर कोई भूत-प्रेत मेरा पीछा तो नहीं कर रहा है? वहाँ पहुँचनेपर यदि किसी भूत या प्रेतने मुझपर आक्रमण कर दिया तो क्या होगा? मैं तो भगवान शिवकी उपासनाके लिये चिता-भस्म लाने जा रहा हूँ तो क्या भगवान शिव

मेरी रक्षा नहीं करेंगे?

भूतके भयसे मन बड़ा आतंकित था, पर शिवोपासनाकी भावना भी बड़ी प्रबल थी। बहुत डरते-डरते चक्रधरने चिताकी ओर भस्म उठानेके लिये हाथ बढ़ाया, परंतु प्रतिक्षण यह भयावनी चिन्ता सता रही थी कि भस्मके उठाते ही यदि भूतने मेरा हाथ पकड़ लिया, तब तो जीवनसे हाथ धोना पड़ेगा।

मुट्ठीमें चिताकी भस्म लेते ही चक्रधर अपने घरकी ओर भागा, भागा भूतके भयके मारे कि वह कहीं पकड़ न ले। श्रीहनुमान-चालीसाकी चौपाई 'भूत पिसाच निकट नहीं आवे। महाबीर जब नाम सुनावे।।', 'जै जै जै हनुमान गोसाईं। कृपा करहु गुरुदेव की नाईं।।' का निरन्तर जप हो रहा था और वह भाग रहा था भरपूर अपनी शक्ति भर। भागते समय चक्रधरने पीछेकी ओर भी देखा नहीं। पीछे देखना भी खतरेसे खाली नहीं था। बस, भागते-भागते जब वह अपने गाँवपर आया, तब उनकी जानमें जान आयी। घर पहुँचकर चक्रधरने साँसमें साँस ली।

दूसरे दिन प्रातः काल चक्रधरने भगवान शिवके मस्तकपर चिता-भस्म चढ़ाई। बड़े भाईने देखा कि आज श्रीशिवलिंगपर राख चढ़ायी हुई है। उन्होंने तुरन्त अनुमान लगा लिया कि यह भी करतूत चक्रधरकी ही होगी। पूछताछ करनेके लिये उन्होंने चक्रधरको बुलाया और डाँटते हुए पूछा— भगवान शिवपर यह राख तुमने चढ़ायी क्या?

चक्रधरने तुरन्त रोनेका नाटक किया और रोते-रोते कहने लगे— घरमें जो गड़बड़ी होती है, वह सब मैं ही करता हूँ क्या?

इतना कहकर वह और भी अधिक रोने लग गया। रोना सुनकर माँ भागी-भागी आयी तथा चक्रधरका पक्ष लेकर बड़े भाईसे कहने लगी— तुम लोग क्यों इसको बार-बार परेशान करते हो?

माँके कारण एक बार फिर चक्रधरका बचाव हो गया। चक्रधरके द्वारा की गयी शिवोपासना पारिवारिक परम्पराके अनुसार विधि-विहित नहीं थी, परंतु इतना तो सत्य ही था कि इस शिवोपासनामें श्रद्धाका भाव बहुत अधिक था। उन्होंने भगवान शिवकी जो अर्चना की, वह सब बाल-बुद्धिके अनुसार की थी।

रूठना छूट गया

बचपनमें चक्रधर बहुत रूठा करता था। जिद्दीपनेके कारण यदि मनकी चाहके अनुसार कोई काम नहीं होता था तो चटसे रूठ जाया करता था। यदि मनमें कोई बात ठान ली है तो वह होनी ही चाहिये। जो ठान लिया, वह ठान लिया। जब चक्रधर लगभग बारह वर्षका था, तब अपने घरपर किसी बातपर रूठ गया। मनानेके अनेक प्रयत्न हुए, पर सब विफल हुए। रोषमें भोजन भी नहीं किया। माँने मनाया, पर चक्रधर न माना। परिवारके और पड़ोसके लोगोंने बड़ी मनुहार की, पर सफलता नहीं मिली। रूठनेके कारण घरका वातावरण बड़ा क्लेशपूर्ण हो गया।

यह नहीं कहा जा सकता कि किसकी कौन-सी बात कब दिलको छू जाती है और दिल-दिमागपर असर कर जाती है। चक्रधरके भाई श्रीदेवदत्तजी अपने कमरेसे निकले। उनके चेहरेपर बड़ी गम्भीरता थी। वे कमरेसे बाहर आकर बड़ी गम्भीरता पूर्वक चक्रधरसे कहने लगे— चक्रधर! क्या तुम मेरी एक बात मानोगे?

चक्रधरने कहा— कहिये, क्यों नहीं मानूँगा?

बड़े भाईने कहा— तुम रूठनेकी आदत छोड़ दो। इस आदतको छोड़ देनेसे जीवनमें तुम्हारा अशेष मंगल होगा।

न जाने उन्होंने यह बात हृदयकी किस गहराईसे कही कि चक्रधरके हृदयमें उनकी बात लग गयी। तुरन्त चक्रधरने उत्तर दिया— आजसे मैं रूठना छोड़ देता हूँ।*

---

*बचपनकी इस घटनाको अनेक बार सुनाकर बाबा कहा करते थे— रूठनेसे कोई लाभ नहीं होता। इससे तो अपने जीवनमें और अपने आत्मीय जनोंमें अपार अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। मेरे बड़े भाईने जो कहा, उस कथनका प्रभाव आजतक मेरे ऊपर है। रूठना तभी होता है, जब मनके अनुसार कार्य नहीं होता। यहींपर आस्तिकताकी पहचान होती है। उद्वेगरहितता-चिन्तारहितता ही सच्ची आस्तिकताकी कसौटी है। सच्चे आस्तिकमें न तो उद्वेग होता है और न कभी चिन्ता रहती है। सच्चे आस्तिकका सहज विश्वास होता है कि मंगलमय प्रभु मेरे लिये वही कर रहे हैं, जिसमें मेरा हित है।

परिस्थिति जब शान्त हो गयी तो अवसर पाकर बड़े भाईने चक्रधरको प्यारपूर्वक समझाया और बतलाया कि किस प्रकार सात्त्विक रीतिसे भगवान शिवकी पूजा करनी चाहिये। फिर तो चक्रधर जलाभिषेक, पुष्पार्पण, स्तुति-वन्दनादिसे भगवान शिवकी अर्चना करने लगा। चक्रधरके हृदयमें जैसी आस्था और भक्ति-भावना थी, उससे उसे भगवान शिवकी कृपा भी प्राप्त हुई। भगवान श्रीशिवके प्रति यह निष्ठा चक्रधरके जीवनमें अन्ततक बनी रही।

* * * * *

घरपर श्रीसत्यनारायण व्रत-कथा

गाँवोंके हिन्दू घरोंमें भगवान श्रीसत्यनारायणकी कथा कहने-सुननेकी प्रथा है। श्रद्धालु लोग प्रत्येक पूर्णिमाको यह कथा सुना करते हैं और इस दिन पूर्णिमाका व्रत भी रखते हैं। यदि परिवारके सब लोग व्रत नहीं रख सकते तो परिवारका कोई एक व्यक्ति सभीके प्रतिनिधिके रूपमें विधिवत् व्रत रखता है। पण्डित श्रीमहीपालजी मिश्रके घरपर भी पूर्णिमाको भगवान श्रीसत्यनारायणजीकी कथा हुआ करती थी। अनेक बार परिवारके प्रतिनिधिके रूपमें किशोर चक्रधरको पूर्णिमाका व्रत रखना पड़ता था। सारे दिन उपवास तो करना ही पड़ता था, पर यदि जल बिना काम नहीं चलता हो तो दिनमें एक बार जल लिया जा सकता है। चक्रधर मध्याह्न कालमें एक बार शक्करका शर्बत ले लिया करता था। संध्याके समय कथा होती थी। भगवान श्रीसीतारामजीकी आरती होती थी। भगवान श्रीशालिग्रामजीका सविधि पूजन होता था। नैवेद्यके रूपमें पंचामृत, फल आदि श्रीठाकुरजीको अर्पित किया जाता था। उपवास करनेके कारण चक्रधरको ही अर्चना करनेके लिये आगे बैठना पड़ता था। उस समय श्रीशालिग्राम-शिला चक्रधरके लिये शिला नहीं रह जाती थी। उस समय श्रीशालिग्राम-शिलामें उसे भगवान श्रीसीतारामजीकी स्फूर्ति होने लगती थी। आरती करते समय मन दिव्य भावोंसे आपूरित रहता था। पूजाके बाद चक्रधरके उपवासका विसर्जन होता था। पूर्णिमाका व्रत तथा भगवानका अर्चन उससे हृदयको सात्त्विक भावोंसे भर दिया करता था।

हेडमास्टर साहब का वात्सल्य

जिस विद्यालयमें चक्रधर पढ़ता था, उसके हेडमास्टर साहबका नाम था आदरणीय श्रीबलदेवप्रसादजी। हेडमास्टर साहबके जीवनमें कर्त्तव्यनिष्ठा और कार्यतत्परता कूट-कूट करके भरी हुई थी। उनका अनुशासन बड़ा कड़ा था। एक बार चक्रधरको किसी एक बाल सुलभ चपलता एवं चञ्चलताके कारण पाँच बेंतकी सजा भुगतनी पड़ी, पर वह सजा भी हेडमास्टर साहबने किस प्रकार दी? माँकी ममता भरे हृदयसे, मुखपर कठोरता तथा वाणीमें शासन लिये हुए उन्होंने बेंत मँगवाई और चक्रधरसे कहा– हाथ फैलाओ।

चक्रधरने अपनी हथेली फैला दी। बहुत हल्का स्पर्श कराते हुए हेडमास्टर साहबने हथेलीपर धीरे-धीरे पाँच बेंत मारे और इसके बाद धमकाते हुए कहा– आगेसे ऐसी धृष्टता करोगे तो विद्यालयसे नाम काट दिया जायेगा।

वे ही हेडमास्टर साहब एक बार छात्रावासके द्वारपर खड़े थे। वे क्यों खड़े थे, पता नहीं। उसी समय चक्रधर उनके पास आया। उन्होंने चक्रधरसे पूछा– क्या तुम मेरे साथ चल सकते हो?

चक्रधरने तुरन्त 'हाँ' कहा और उनके साथ चल दिया वे रूपकला संकीर्त्तन मण्डलमें गये। वहाँ साप्ताहिक संकीर्तन हुआ करता था। इनके पहुँचनेपर जिसने कीर्तन कराया, वह बहुत जमा नहीं। हेडमास्टर साहबने चक्रधरसे पूछा– क्या तुम हरिनाम संकीर्तन करवा सकते हो?

चक्रधरने विनम्र शब्दोंमें कहा– थोड़ा बहुत तो करा ही सकता हूँ।

चक्रधरसे अनुकूल उत्तर पाकर हेडमास्टर साहबने सबके समक्ष कहा– अब मेरे विद्यालयका एक छात्र कीर्तन करायेगा।

कीर्तन करानेके लिये चक्रधर सामने आया और उसने सभी उपस्थित लोगोंसे निवेदन किया– मैं जैसे-जैसे कहूँ, वैसे-वैसे आपको बोलना चाहिये। मैं जितना-जितना कहूँ, उतना-उतना ही आपको बोलना चाहिये। जो लोग स्वरमें स्वर नहीं मिला सकें, उनसे प्रार्थना है कि वे मन-ही-मन भगवानके नामका कीर्तन करें। ऐसे लोग यदि मौन रहकर मन-ही-मन कीर्तन करेंगे तो कीर्तन अधिक सुन्दर और

प्रभावोत्पादक होगा।

इतना कहकर चक्रधरने 'रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम' कीर्तन करवाना आरम्भ किया। लगभग बीस-पच्चीस मिनट कीर्तन करवाया होगा। एक विचित्र समा बँध गया। चक्रधरने देखा कि हेडमास्टर साहबके कपोलोंपर अश्रुकी धारा बह रही है। हेडमास्टर साहबका यह भक्त स्वरूप देखकर चक्रधरको बड़ा आश्चर्य हुआ। कहाँ तो विद्यालयके वातावरणमें वाणीकी कठोरता और कहाँ संकीर्तनके इस प्रवाहमें हृदयकी कोमलता!

संकीर्तनके बाद हेडमास्टर साहबने चक्रधरसे पूछा— चक्रधर! क्या तुम प्रति सप्ताह थोड़ी देरके लिये आ सकते हो?

चक्रधरने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी। फिर तो प्रति सप्ताह रूपकला संकीर्तन मण्डलमें हेडमास्टर साहबके साथ चक्रधर जाने लगा। इतना ही नहीं चक्रधरके प्रति हेडमास्टर साहबका वात्सल्य बहुत बढ़ गया।

* * * * *

जिला-स्तरीय संगीत प्रतियोगिता

एक बारकी बात है। विद्यार्थियोंकी जिला-स्तरीय संगीत प्रतियोगितामें चक्रधरने भाग लिया। उस संगीत प्रतियोगितामें जिला भरके स्कूलोंके विद्यार्थी भाग लेने आये थे। चक्रधरका कण्ठ बड़ा सुरीला और बड़ा सुमधुर होनेसे उसे अपने स्कूलकी ओरसे हेडमास्टर साहबने चुन लिया था। चक्रधरसे बिना पूछे ही हेडमास्टर साहबने प्रतियोगितामें नाम भेज दिया। जब चक्रधर संगीत प्रतियोगितामें भाग लेने पहुँचा तो गानेवाले विद्यार्थियोंके गायन-स्तर तथा वादन-कौशलको देखकर वह चकित हो गया। जो विद्यार्थी अन्य स्कूलोंसे आये थे, उनमें कई बड़े अच्छे गायक थे तथा कई शास्त्रीय संगीतमें भी बड़े प्रवीण थे। उनकी आलापचारी तथा स्वर-संधानको देखकर चक्रधरको ऐसा लगने लगा कि इस संगीत प्रतियोगितामें सफलता पाना टेढ़ी खीर है। चक्रधरको राग-रागिनीकी जानकारी नहीं थी। सफलताकी सम्भावना न्यूनातिन्यून होनेके बाद भी चक्रधरकी प्रयत्नशीलतामेंतनिक भी न्यूनता नहीं आयी। चक्रधर इस

तथ्यका पता लगानेमें संलग्न हो गया कि उसका नाम गायकोंकी नामावलीमें किस स्थानपर रखा गया है। चक्रधर उन अध्यापक महोदयसे मिला, जिनपर प्रतियोगिताके संयोजनका उत्तरदायित्व था। पूछनेपर पता चला कि नामावलीमें तीसरा नाम उसीका है। चक्रधरको ऐसा लगा कि यह तो ठीक नहीं और नामावलीमें तीसरे क्रमांकपर नाम रहनेसे तो सफलता कभी मिल ही नहीं सकती। चक्रधरने उन संयोजक अध्यापकजीसे कहा— आपने मेरा नाम आरम्भमें क्यों रखा? आधेके बाद रखिये।

इसके लिये वे संयोजक अध्यापकजी तैयार नहीं हुए। चक्रधरने पुनः प्रार्थना की। इसपर भी वे नहीं माने। तब चक्रधर कुछ उत्तेजित स्वरमें कहने लगा— आप अपने विद्यार्थियोंके साथ पक्षपात करते हैं। मैं अभी जाकर प्रधानाध्यापकजीसे यह बात कहूँगा।

एक बार तो उन्होंने आवेशपूर्ण स्वरमें कह ही दिया— जाओ, कह दो।

चक्रधर जब वस्तुतः प्रधानाध्यापकजीके पास जाने लगा तो उन संयोजक अध्यापकजीने चक्रधरको बुलाया और पूछा— तुम अपना नाम कहाँ रखना चाहते हो?

चक्रधरको ऐसा लगा कि ये एकदम ढीले पड़ गये हैं। चक्रधरने उनसे कहा— मेरा नाम आधे कार्यक्रमके बाद रखें।

उन्होंने वैसा ही कर दिया। जब संगीत प्रतियोगिता आरम्भ हुई तो विभिन्न विद्यालयोंके छात्र मंचपर आकर श्रोताओंके समक्ष अपने गायन-वादनका कौशल प्रस्तुत करने लगे। उनके कौशलकी सराहना जब श्रोतागण करते तो वायुमण्डल गूँज उठता। राग-रागिनीका लालित्य वहाँके वातावरणपर छाया हुआ था। राग-रागिनीके माधुर्यमें जब एक-एक श्रोता पगा हुआ था, तभी अपना कौशल प्रस्तुत करनेके लिये चक्रधरको मंचपर बुलाया गया।

चक्रधर मंचपर आया। गानेसे पहले उसने एक छोटा-सा देश-भक्तिपूर्ण भाषण देते हुए कहा— आज अपना देश परतन्त्र है। पराधीनताकी बेड़ियोंसे जकड़ा हुआ है। आज अपने देशके भाई-बहिनोंको खानेके लिये अन्न, पहननेके लिये वस्त्र और चिकित्साके लिये औषधि

भी भली प्रकारसे नहीं मिल पाती। अपने देशमें जहाँ ऐसी दरिद्रता और रुग्णताका नग्न नृत्य हो रहा है, वहाँ यह राग और रंग, यह सितार और झंकार क्या शोभा देता है? देश और समाजकी विषम परिस्थितिमें इस गीतोल्लासका, इस वाद्य-वादनका, इस राग-रागिनीका, इस मनोरञ्जनका औचित्य कहाँतक सिद्ध किया जा सकता है? एक ओर सिसकते-कलपते माँ-बहिनोंकी अजस्र अश्रुधारा और दूसरी ओर हम लोगोंका यह आमोद-प्रमोद? मैं नहीं जानता कि मेरी इन भावनाओंका समादर आपके द्वारा होगा या नहीं। मेरा हृदय व्यथित है। मैं तो यही निवेदन करूँगा कि मेरे गायनके समय न हारमोनियम, न तबला, न तानपूरा, न वायलिन, यह सब कुछ नहीं बजेगा। मैं तो केवल अपनी मातृभूमिकी वन्दना ही भेंट रूपमें प्रस्तुत करूँगा।

यह वक्तव्य बड़ा ही प्रभावपूर्ण था। इस प्रभावशाली वक्तृत्वसे सारे वातावरणका रंग बदल गया। एक घोर निस्तब्धता छा गयी। उस नितान्त नीरव वातावरणमें चक्रधरने गाया 'वन्दे मातरम्' , जो आजकल अपने देशका राष्ट्रगीत है। एकदम समा बँध गया।

गीतमें जब आया– 'के बोले माँ तुमि अबले', उस समय इतनी ताली बजी कि सारा पंडाल गूँज उठा। अबतक किसीके गायनपर इतनी ताली नहीं बजी थी। चक्रधरका कण्ठ तो मधुर था ही, हाथोंकी भावपूर्ण चेष्टाओंसे वह गायन और भी प्रभावोत्पादक बन गया था। सारा वातावरण गीतके भावसे भावित हो रहा था। मातृवन्दनाकी पंक्तियोंने सब श्रोताओंको आकृष्ट कर लिया था। गीतके समाप्त होते ही प्रतियोगिता सभाके सभापतिने अपनी कुर्सीसे उठकर तुरन्त विशेष पारितोषिक प्रदान किये जानेकी घोषणा कर दी। घोषणाके होते ही एक बार फिर सारा पंडाल तालियोंकी गड़गड़ाहटसे गूँज उठा। कार्यक्रमके बाद सहपाठियोंने चक्रधरको अत्यधिक साधुवाद दिया ही, स्कूलके हेडमास्टर साहबका भी प्यार बहुत अधिक उमड़ पड़ा।

* * * * *

नोट की चोरी और प्राप्ति

चक्रधर जब मिडिल स्कूलमें पढ़ता था, उस समयकी बात है। सरकारी शिक्षा विभागकी ओरसे गया जिलेके छात्रोंकी योग्यताकी परीक्षा होनेवाली थी। इस परीक्षामें जो सर्वप्रथम होगा, उसको सरकारकी ओरसे प्रतिमास पाँच रुपया छात्रवृत्ति मिलेगी। उस समयका पाँच रुपया आजके सौ गुना रुपयेसे अधिक समझना चाहिये। छात्रवृत्तिके साथ-साथ सरकारी स्कूलके छात्रावासमें रहनेकी सुविधा मिलेगी तथा शिक्षा-शुल्क (Fees for Schooling)से विमुक्ति रहेगी।

इस योग्यता परीक्षामें चक्रधरने भी बैठनेका विचार किया। उसने अपनी माँसे पाँच रुपया माँगा। माँसे रुपया लेकर वह परीक्षा देनेके लिये गया नगरको गया। इस योग्यता परीक्षामें भाग लेनेके लिये सारे गया जिलेसे लगभग पाँच हजार छात्र आये थे। चक्रधर बड़ा सशंक था कि इस भीड़-भाड़में कोई मेरा रुपया चुरा न ले। सावधानी रखनेकी दृष्टिसे बालक चक्रधरने पाँच रुपयेकी नोटका नम्बर एक कागजपर नोट कर लिया तथा उस नम्बरको याद भी कर लिया।

बहुत सावधानी रखनेके बाद भी जिस बातकी आशंका चक्रधरको थी, वह घटित हो गयी। किसीने उसका रुपया चुरा लिया। चक्रधरने मन-ही-मन तय किया कि उस चोर छात्रका पता लगाकर गायब हुए नोटको प्राप्त करना चाहिये।

डिप्टी इंस्पेक्टर-आफ-स्कूल्स ही इस योग्यता परीक्षाके सुप्रिंटेंडेंट थे। चक्रधर परीक्षा-सुप्रिंटेंडेंट महोदयके पास गया और सारी बात सुना दी। पाँच रुपयेके चोरी हो जानेका पूरा वृत्त सुनकर सुप्रिंटेंडेंट महोदयने कहा– इस विषयमें भला मैं क्या कर सकता हूँ? परीक्षा देनेके लिये सारे जिलेसे लगभग पाँच हजार छात्र आये हैं। इनमेंसे किसको चोर ठहराया जा सकता है? इस बारेमें कोई कार्यवाही किया जा सकना सम्भव नहीं है।

सुप्रिंटेंडेंट महोदयके उत्तरसे चक्रधर बड़ी निराशा हुई। उसने तो ऐसा सोचा था कि सुप्रिंटेंडेंट महोदयके सक्रिय होनेसे मेरा काम बन जायेगा, पर सुप्रिंटेंडेंट महोदयके द्वारसे खाली हाथ लौटना पड़ा। चक्रधर

इसपर भी अपने प्रयाससे विरत नहीं हुआ। जिस धर्मशालामें चक्रधर ठहरा था, वहाँ बहुतसे छात्र थे और उनकी सँभाल तथा व्यवस्थाका उत्तरदायित्व एक अध्यापक महोदयको सौंपा गया था। उन अध्यापक महोदयका नाम शायद श्रीदामोदरप्रसादजी था। चक्रधर श्रीदामोदरप्रसादजीके पास गया। उसने अध्यापक महोदयसे नोटके चोरी होनेकी बात बताकर यह अनुरोध किया— इस धर्मशालामें जितने छात्र हैं, उनको आप एक पंक्तिमें खड़े कर दीजिये। पंक्तिमें खड़े हुए छात्र आपकी उपस्थितिमें एक-एक करके मेरे सामने आयें और कुछ क्षणके लिये खड़े रहें। मैं बता दूँगा कि किसने मेरा नोट लिया है। मेरी नोटका नम्बर यह है। इस नम्बरका नोट अगर उसके पास हो तो आप उससे मुझे दिलवा दें।

श्रीदामोदरप्रसादजीने कहा— यह कौन-सी बड़ी बात है? यह कार्य तो इसी समय करवाया जा सकता है।

अध्यापक श्रीदामोदरजीके आदेशपर सभी छात्र एक पंक्तिमें खड़े हो गये। जैसा चक्रधरने कहा था, बारी-बारीसे एक-एक छात्र चक्रधरके सामने आता। कई छात्रोंके बाद एक छोटा-सा छात्र आया और वह चक्रधरके सामने कुछ क्षण खड़ा रहा। वह छात्र चक्रधरके लिये सर्वथा अपरिचित था। चक्रधरने उसके खड़े होनेके कुछ क्षण बाद अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजीसे कहा— इसीने मेरा नोट चुराया है।

अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजी उस छात्रको एक किनारे ले जाकर पूछने लगे तो उसने साफ इंकार कर दिया कि मैंने रुपया नहीं लिया है। तब अध्यापक महोदय उस छात्रको पुनपुन नदीके तटपर ले गये और उससे कहा— देखो, उसने अपने नोटका नम्बर बता रखा है। मैं तुम्हारी तलाशी लूँगा। यदि वह नोट तुम्हारे पास मिल गया तो मैं तुमको इतनी मार मारूँगा कि तुम्हारी पीठसे रक्त बह निकलेगा। मेरे हाथमें यह बेंत देख रहे हो न! इसी बेंतसे तुम्हें पीटूँगा। यदि तुम अपने आप दे दोगे तो मैं तुम्हें कुछ नहीं कहूँगा।

मारके भयसे वह काँप उठा और अपने पाससे नोट निकालकर उसने दे दिया। उस नोटका नम्बर वही था, जो बतलाया गया था। इस घटनासे अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजीपर तथा अन्य छात्रोंपर बालक

चक्रधरका बड़ा प्रभाव पड़ा। उन सभीके मध्य यह बात चल पड़ी कि यह चक्रधर कोई सिद्धि जानता है, तभी तो इसने चोरको एकदम सही पकड़ लिया।

अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजी चक्रधरसे कौतूहलवशात् पूछ बैठे– क्या तुम कोई सिद्धि जानते हो?

चक्रधर अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजीको बताने लगा– मैं भगवान शंकरकी उपासना किया करता हूँ। मेरे हृदयस्थ भगवान शंकरका जो विग्रह है, उनसे मैंने कातर प्रार्थना की कि आप मुझे सही-सही उत्तर दीजियेगा। मेरे सामने ज्यों ही एक छात्र खड़ा होगा, मैं आपसे उस छात्रके बारेमें पूछूँगा। यदि वह नहीं लिया हो तो आप गर्दन हिलाकर 'ना' कर दीजियेगा। यदि वह लिया हो तो तदनुसार संकेत कर दीजियेगा। ज्यों ही मेरे सामने छात्र आकर खड़ा होता तो पहले मैं अपने हृदयमें भगवान शंकरका ध्यान करता, फिर उस समक्ष स्थित छात्रके हृदयमें भगवान शंकरका ध्यान करता, तदुपरान्त मैं पूछता अपने हृदयस्थ भगवान शंकरजीसे। मेरे हृदयमें विराजित भगवान शंकर ज्यों हि 'ना' का संकेत करते, मैं यही कह देता कि इसने नहीं लिया है। इस प्रकार लगभग पच्चीस छात्रोंको मैंने निर्दोष बता दिया। ज्यों ही वह छोटा-सा छात्र आया, भगवान शंकरकी ओरसे 'हाँ' का संकेत मिलते ही मैंने कह दिया कि इसने चोरी की है। सच्ची बात यह है कि मैं कोई सिद्धि नहीं जानता। मैंने भगवान शंकरसे ईमानदारीपूर्वक सच्चे मनसे प्रार्थना की थी कि जो सही बात हो, वही ही सामने आनी चाहिये। प्रार्थनाकी सच्चाईके कारण ही हृदयस्थ श्रीविग्रहसे सही उत्तर मिला। यह मेरी कोई सिद्धि नहीं है। मात्र सच्ची और गहरी प्रार्थनाका एक परिणाम था।

अध्यापक श्रीदामोदरप्रसादजीने चक्रधरको बड़ा प्यार और आदर दिया।

* * * * *

खेत से ऊख और चने की चोरी

एक प्रसंग चक्रधरके बचपनका है। उस समय चक्रधरकी आयु सात या आठ वर्षकी रही होगी। एक बार एक खेतके बगलसे निकलते समय चक्रधरने उस खेतसे एक ऊख तोड़ ली। ऊँख ले तो ली, पर मनमें विचार आया कि यह ठीक नहीं हुआ। जगा हुआ यह विवेक फिर सो गया। यह विचार हल्का था।

फिर किसी दिन चक्रधर एक चनेके खेतके पाससे गुजर रहा था। वे खेतमेंसे चना उखाड़ करके खाने लगा। चक्रधरने मन-ही-मन पूछा— क्या यह चीज तुम्हारी है?

मनने जबाब दिया— नहीं।

फिर प्रश्न हुआ— जिसकी यह वस्तु है, क्या उससे पूछ करके लिया है?

उत्तर मिला— नहीं।

मनने पुनः पूछा— जिसकी वस्तु है, उसके बिना पूछे उसकी वस्तु ले लेना, यह क्रिया कैसी है? यह काम किस रूपमें गिना जायेगा?

मनने कहा— चोरी।

बस, इस प्रकारका विचार आते ही चक्रधरने निश्चय कर लिया— अब कभी कोई वस्तु बिना पूछे नहीं लेनी है।*

* * * * *

*बाबाने बतलाया— संन्यासके बाद तो (बिना पूछे कोई वस्तु) लेनेका प्रश्न ही नहीं है, संन्यासके पहले भी वैसा निश्चय हो जानेके बाद फिर कभी ऐसा प्रसंग आया ही नहीं।

चक्रधरके कहनेका उमाशंकरके मनपर बड़ा असर पड़ा और तथ्यमूलक उसके बड़ा सुधार आया। चक्रधरसे उपदेश सुननेका उमाशंकरके जीवनमें यह प्रथम अवसर था। चक्रधरके जीवनमें जो सत्य निष्ठा थी, उसकी छाप उमाशंकरके मनपर आज भी है।

* * * * *

चञ्चलता की निवृत्ति

चक्रधर जब हाई स्कूलमें पढ़ता था, तब विज्ञानके अध्यापककी धर्मपत्नीका देहान्त हो गया। वह राजयक्ष्माकी बीमारीसे मरी थी, अतः गाँवका कोई भी व्यक्ति शवको ले जानेके लिये तैयार नहीं था। स्कूलके प्रधानाचार्यने किशोर चक्रधरको बुलाया, क्यों कि यही सबका नेता था। उस समय छात्रावासमें लगभग तीस-बत्तीस छात्र थे। प्रधानाचार्यने इस कार्यके लिये उत्साहित करते हुए सेवा-परायण चक्रधरको तैयार किया। चक्रधरके तैयार होते ही कई छात्र तैयार हो गये। प्रधानाचार्यने अपने चपरासी दिये। अर्थी तैयार की गयी तथा शवको श्मशान घाटपर ले गये। चिता सजायी गयी तथा शवको रखकर चितामें आग लगा दी गयी। सभी छात्र उस रेतीली जमीनपर बैठ गये। तबतक एक साधु आया। वह साधु तो नाम मात्रका था। उसने कहा– यहाँ शव जलाया जा रहा है, अतः मुझे पाँच रुपया दो।

चक्रधरने कहा कि हम लोग विद्यार्थी हैं, हमारे पास कुछ है नहीं, जो आपको दें, पर वह साधु तो जिद्द पकड़े हुए था। चक्रधरने उसे बहुत ही समझाया, पर वह माना नहीं। चक्रधरके एक साथीका नाम था बदरीप्रसाद। बदरीप्रसादने भी उस साधुको बहुत समझानेका प्रयत्न किया, पर वह तो अपने हठपर अड़ा हुआ था। जब वह साधु किसी प्रकार नहीं माना तो फिर उस साधुको सब विद्यार्थी तंग करने लगे। अब वह साधु परेशान होकर गाली देता हुआ चला गया।

किशोरावस्थामें ऐसी चञ्चलता युवक किया ही करते हैं और यही चाञ्चल्य श्मशान घाटपर हम विद्यार्थियों द्वारा हुई। घाटसे वापस आनेके बाद चक्रधरके चिन्तनमें बड़ा परिवर्तन आया। अन्तरकी सात्त्विकता जाग उठी और इस अभद्रताके लिये उसकी सात्त्विकता उसे

सत्य-निष्ठा

चक्रधरके ताऊजी श्रीश्रीपालजीके सुपुत्रका नाम है श्रीदेवदत्तजी मिश्र और श्रीदेवदत्तजी मिश्रके सुपुत्रका नाम है उमाशंकर मिश्र। चक्रधर उमाशंकर मिश्रको चाचाजी कहा करता था। चक्रधर गया शहरमें जिला स्कूलके एक छात्र था। उमाशंकर गाँवके मिडिल स्कूलका एक साधारण विद्यार्थी था।

चक्रधरका ध्यान अपने मिश्र परिवारके बालकोंकी पढ़ाईपर भी रहा करता था। जब वह गयासे गाँवपर घर आया करता था तो समय-समयपर घरके बालकोंसे किसी विषयमें प्रश्न कर लिया करता था, जिससे उसे उनकी योग्यता और कमजोरीका अन्दाजा मिल सके। उमाशंकरसे प्रश्न करनेपर चक्रधरको यह समझनेमें देर नहीं लगी कि वह गणितके विषयमें कच्चा है। चक्रधरने उमाशंकरके गणितके अध्यापकसे सम्पर्क करके उसके विषयमें जानना चाहा। उमाशंकरके अध्यापकने उसकी कमजोरीके बारेमें बतलाया ही, इसी बातचीतके बीचमें यह भी उन्होंने बतला दिया कि यह उमाशंकर दूसरे लड़कोंकी कापियोंसे नकल करके प्रश्नोंको हल कर लिया करता है। इतना ही नहीं, सजा न पानेके लिये यह झूठ भी बोला करता है और इस प्रकार इसमें मिथ्या भाषणकी गलत आदत पड़ रही है। यदि यह हमेशा नकलबाजी करता रहेगा तो यह लड़का सदाके लिये कमजोर रह जायेगा और गणित सीख ही नहीं सकेगा।

उमाशंकरके अध्यापकने उसके बारेमें बातें यथार्थ ही कही थी, पर शिक्षककी छड़ीसे बचनेके लिये उसके पास कोई दूसरा उपाय भी नहीं था। अध्यापकके द्वारा सच्चा चिट्ठा पाकर चक्रधरने उसे एक दिन बहुत डाँटा और लगभग एक घंटेतक वे सत्य-पालनके महत्त्वको समझाता रहा। चक्रधरने फिर प्यार करते हुए कहा कि यदि सत्य-पालनके कारण शिक्षकसे मार भी खानी पड़े तो उस मारमें भी कल्याण ही है। जब शिक्षक विषयगत कमजोरी जानेंगे तो वे स्वयं बार-बार समझायेंगे-बतलायेंगे-पढ़ायेंगे और धीरे-धीरे वह कमजोरी दूर हो जायेगी।

धिक्कारने लगी। वह स्वयं ही स्वयंसे प्रश्न करने लगा कि क्या यह उचित है? क्या यही सही जीवन है? उसे तंग तो किया चञ्चलताकी पराकाष्ठापर जाकर, किन्तु फिर उस वृत्तिकी ही निवृत्ति हो गयी।

* * * * *

स्वप्न में संत-दर्शन

गाँवमें एक जगह एक नाटक-मण्डली आयी और मण्डलीके लोग अभिनय-गायन-वादन कर रहे थे। उस कार्यक्रममें एक महिलाने भी भाग लिया। उसका सौन्दर्य तो साधारण स्तरका था, परन्तु कण्ठ बड़ा मधुर था तथा अभिनय भी बड़ा स्वाभाविक था। चक्रधरकी सेवा-भावना उस महिलाकी ओर आकृष्ट हुई। वह आकृष्ट हुआ उसकी कलाके कारण। उस महिलाके गायनकी सुन्दरता और अभिनयकी स्वाभाविकता सराहनीय थी। कार्यक्रमके बाद चक्रधरने उसके बारेमें जानकारी प्राप्त करनी चाही, यह जानकारी इसलिये कि जो इतनी गुणी है, उस गुणका सम्मान करनेके लिये यदि उसकी कोई सेवा उसके द्वारा बन जाये तो उत्तम ही है। पूछताछ करनेपर पता चला कि उसके जीवनका स्तर निम्न ही है। थियेटर कम्पनी या नाटक मण्डलीमें जो काम करते हैं, उनके शील और चरित्रके आगे प्रायः प्रश्नबाचक चिह्न बना रहता है। चक्रधरके मनमें आया कि वह ऐसा निन्दनीय जीवन भला क्यों व्यतीत कर रही है। यदि उसका जीवन सात्त्विक और संयमित हो तो कितना अच्छा होता। चक्रधरने मन-ही-मन सोचा कि उस महिलाके कल्याणके लिये मेरे द्वारा कुछ किया जाना चाहिये।

जिस दिन चक्रधरने ऐसा सोचा, उसी दिन रात्रिमें उन्होंने एक स्वप्न देखा। उन्होंने स्वप्नमें देखा कि उसके सामने एक अति वृद्ध संत आकर खड़े हो गये हैं। उनकी दाढ़ी बहुत लम्बी है। शीशके समस्त केश पूर्णतः श्वेत हैं। मुखमण्डलपर दिव्य कान्ति है। उन तेजोमय संतने चक्रधरसे कहा– बेटा! महिलाके उद्धारकी बात मनसे निकाल दो। तुम्हारे लिये अभी यही उचित है कि तुम अपने पथपर चलते रहो। सुधारादिका कार्य शुभ है, पर अभी तुम इधर-उधर मत देखो! यह कार्य उनका है, जो मंजिलपर पहुँच चुके हैं। अभी तो तुम

अपनी दृष्टि अपने लक्ष्यपर टिकाये रखो। इधर-उधर देखनेसे अटकने-भटकनेका भय है।

इतना कहकर वे संत अदृश्य हो गये। उसी समय चक्रधरकी नींद खुल गयी। अब प्रभात होनेवाला था। प्रातःकालीन स्वप्नमें उन तेजोमय संतने जो निर्देश दिया, उसको चक्रधरने अपने लिये परम कल्याणमय माना और इसके बाद वह सेवा-भावनासे विरत हो गया।

* * * * *

विचारों पर राजनैतिक रंग

उन दिनों सारे देशमें राजनैतिक आन्दोलन और समाज-सुधारकी लहर प्रबल रूपसे व्याप्त थी। राजनैतिक गतिविधियोंमें सदा निमग्न और समाज-सुधारकी दिशामें सतत प्रयत्नशील प्रबुद्ध लोगोंकी जो विचार-धारा थी, उसका प्रभाव चक्रधरके किशोर मानस-पटलपर भी था। इसीका परिणाम यह था कि वह चक्रधर साधुओं-संन्यासियोंको परजीवी मानता था और मानता था उनको समाजजीवनपर एक निन्दनीय भार। समाज-सुधारकोंके प्रभावमें वह 'प्रबुद्ध' किशोर साधु-संतोंपर व्यंग करनेसे बाज नहीं आता था। वह नहीं चाहता था कि हमारे घरपर साधु-संत आवें, परन्तु पण्डितजीका द्वार तो संत-सेवाके रूपमें विख्यात था और वे पण्डितजीके घरपर आया ही करते थे।

जब साधु-संन्यासियोंको माँ भिक्षा करवाया करती थी, तब उसे अपने पुत्र चक्रधरकी उपस्थिति अभीष्ट नहीं रहती थी। अँग्रेजी स्कूलके वातावरण तथा राजनैतिक साथियोंके संगसे प्रभावित-विभावित चक्रधर साधु-संन्यासियोंके प्रति अभद्र व्यवहार कर बैठता था। 'अहं च त्वं च' को विकृत करके 'हंच तंच' बोलकर उनका मजाक उड़ाया करता था। उन दिनोंके किशोरावस्थावाले चक्रधरने यह कभी सोचा भी नहीं था कि एक दिन उसे भी गैरिक वस्त्र धारण करके संन्यासी बन जाना होगा। जो भी हो, संतोंकी सेवामें सतत उत्साही माँ यही चाहती थी कि उनकी भिक्षाके समय उसका पुत्र चक्रधर कहीं अन्यत्र अपने मित्रोंके पास रहे और किसी-न-किस बहानेसे उसे भेज ही दिया करती थी।

क्षणिक कुसंग

पण्डित श्रीमहीपालजी मिश्रने एक बार किसी यजमानके यहाँ श्रीदुर्गासप्तशतीके पाठ करनेका निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। यजमानके घर पाठके संकल्पका विधान भी विधिवत् सम्पन्न हो गया तथा पण्डितजीने श्रीदुर्गापाठका अनुष्ठान आरम्भ कर दिया। अनुष्ठानकी अवधिमें एक बार वे अस्वस्थ हो गये और यजमानके घर उनका जा सकना सम्भव नहीं था। पिताजीने अपने किशोर पुत्र चक्रधरसे पूछा— क्या तुम जाकर पाठ कर दोगे? मैं तो जानेमें विवश हूँ। जब श्रीदुर्गापाठका संकल्प ले लिया गया है तो पाठ करनेके लिये जाना ही चाहिये।

चक्रधर सदा ही माता-पिताका आज्ञाकारी रहा। पिताजीके कहनेके बाद न जानेका प्रश्न ही नहीं था। उसने कहा— मैं चला जाऊँगा।

जिस यजमानके यहाँ पाठ करना था, वह दूसरे गाँवका था। प्रातःकाल ही स्नानादिसे निवृत्त होकर चक्रधरने श्रीदुर्गासप्तशतीकी पोथी सँभाली और यजमानके गाँवकी ओर चल दिया। यजमानके घर जाकर उसने पाठ तो किया, पर पाठ पूर्ण करनेमें बहुत अधिक समय लग गया। अभ्यासके अभावमें संस्कृत श्लोकोंका धारा-प्रवाह पाठ सम्भव नहीं हो सका, पर पाठको शुद्ध एवं पूर्ण करना ही था। साढ़े तीन घंटेमें पाठको पूरा करके वह अपने गाँव वापस आ रहा था। दोपहरका समय था। मुखपर थकावटके चिह्न थे। राहमें मामाजी मिल गये। उसने चरण छूकर मामाजीको प्रणाम किया। मामाजीने पूछा— इतने थके-थके कैसे लग रहे हो? कहाँसे आ रहे हो?

चक्रधरने उत्तर दिया— यजमानके यहाँ श्रीदुर्गा-पाठ करने गया था। सारा पाठ साढ़े तीन घंटेमें पूरा कर पाया। इतनी देरतक एक आसनपर लगातार बैठे रहनेसे बड़ी थकावट आ गयी है।

मामाजीने उसको मूर्ख बताते हुए कहा— कहीं इस तरह पाठ किया जाता है? जबतक यजमान सामने रहे, तबतक तो पाठ ठीकसे करना चाहिये और ज्यों ही यजमान सामनेसे हट जाये, त्यों ही

नौ-दस पृष्ठ बिना पाठ किये हुए ही उलटकर आगे बढ़ जाना चाहिये। यजमान लोग दक्षिणा ही कितनी देते ही हैं? यदि पाठ विधिवत् किया जाये तो जीवनका निर्वाह कठिन हो जायेगा।

चक्रधरने अपने मामाकी बात मान ली। क्षणभरके कुसंगका यह प्रभाव था कि जीवनकी रेलगाड़ी पटरीपरसे उतर गयी। 'को न कुसंगति पाइ नसाई।' दूसरे दिन उसने श्रीदुर्गा-पाठ वैसे ही किया, जैसे मामाजीने बतलाया था। पाठ करके जब वह अपने गाँवकी ओर वापस चला तो उसका मन उसीकी भर्त्सना करने लगा— आज तुमने ठीक नहीं किया। आज यह गलती कैसे कर दी?

घरपर आकर चक्रधरने अपनी सारी आत्म-ग्लानि पूर्ण विवरणके साथ अपने पिताजीको सुना दी। यह सब सुनकर पण्डित श्रीमहीपालजी मिश्रको बड़ा कष्ट हुआ। अपने पुत्रको प्यारसे समझाते हुए पण्डितजीने कहा— बेटा! ऐसी वञ्चना अपनेको शोभा नहीं देता। आगेसे ऐसा कार्य कभी मत करना। अपने लिये यही उचित है कि दक्षिणा-निरपेक्ष होकर यजमानके हितके लिये पूजन- अर्चनका कार्य विधिपूर्वक सम्पन्न करना चाहिये। जीवनका निर्वाह न तो यजमान करता है और न यजमानकी दक्षिणासे होता है। यह सब तो भगवानकी अहैतुकी कृपासे होता है। यदि यजमान दक्षिणा कम देता है तो उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। अनुष्ठान करनेके उपरान्त दक्षिणा मिले, अथवा न मिले, अथवा कम मिले, पर अपनेको कम-से-कम उन देवी-देवताओंकी प्रसन्नता तो मिलेगी ही।

इतना कहनेके बाद पण्डितजी अपने बिस्तरसे उठे। बिस्तरके पास भूमिपर ही पूजावाला आसन बिछाया। आसनपर बैठकर आचमन किया, जल छिड़ककर आसन-शुद्धि तथा आत्म-शुद्धि की और फिर पण्तिजीने यजमानके निमित्त सम्पूर्ण श्रीदुर्गा-पाठ किया। इसके बाद जब चक्रधर यजमानके यहाँ पाठ करने गया तो उसने सम्पूर्ण पाठ सविधि ही किया। क्षणिक कुसंगके प्रभावको पिताजीकी सत्य-निष्ठा एवं कर्तव्य-परायणताने प्रक्षालित कर दिया।

* * * * *

अभिनय कौशल

अभिनय करनेमें चक्रधर बड़ा कुशल था। अभिनय-पटुताको देखकर उसकी बड़ी सराहना होती थी। चक्रधरके पिताजी जिस राजवंशके पुरोहित थे, उस राजकुलके राजकुमारोंने एक अभिनय समिति (DRAMATIC CLUB) की स्थापना कर रखी थी। उस राजघरानेमें चक्रधरका बड़ा सम्मान था तथा वे लोग हमेशा चक्रधरको अपने पास रखना चाहते थे। उस अभिनय समितिमें यदा-कदा नाटक अभिनीत होता ही रहता था। इसे एक अद्‌भुत संयोग ही कहना चाहिये कि इने-गिने अवसरोंको छोड़कर चक्रधरको प्रायः साधु-संन्यासीका पार्ट अथवा पागलका पार्ट दिया जाता था। इस बातकी किसे कल्पना थी कि इस पार्टका अभिनय करनेवाला चक्रधर मिश्र ही एक दिन भविष्यमें संन्यासी वेषको धारण करके प्रेम-पथका पागल पथिक बन जायेगा।

एक बार चक्रधरको पागलका पार्ट दिया गया। चक्रधरने कहा—मंचपरके पर्देके पीछेसे जैसे अन्य पात्र आते हैं, मैं वैसे नहीं आऊँगा। मेरी योजना दूसरी है। पागलका वेष बना लेनेके बाद मैं नाटक-घरकी दीवालको फाँद करके आऊँगा, जहाँ दर्शक लोग बैठ करके नाटक देखते हैं।

सहयोगी लोगोंने चक्रधरके विचारका विरोध नहीं किया, अपितु समर्थन ही किया। चक्रधरने पागलका वेष बनाया। सिरसे पैरतक आधे अंगको काले रंगसे और शेष आधे अंगको सफेद रंगसे रंग लिया। इसके बाद हाथमें छोटे-छोटे कंकड़ ले लिये। किसी भी दर्शकको कल्पना नहीं थी कि कोई अभिनेता दीवाल फाँद करके आ सकता है। चक्रधरका वेष तो विचित्र था ही, उनका शरीर भी फटे चिथड़ोंसे ढका हुआ था। इस रूपमें चक्रधर चीखते-चिल्लाते, ही-ही हो-हो करते, पागलोंकी-सी बोली बोलते हुए, कंकड़ कभी इधर कभी उधर मारते हुए दीवाल फाँद करके आया। लोगोंको ऐसा लगा मानो सचमुच ही कोई पागल आ गया है।

जिस कुर्सीपर राजा साहब बैठे हुए थे, उधरकी ओर मुँह करके एक कंकड़ राजा साहबकी ओर भी चक्रधरने मारा। जन-साधारणकी यह

हलवाईकी दूकानपर ले गया और उनको भर पेट भोजन करवाया। वे साधु भी चक्रधरपर बड़े प्रसन्न हुए। चक्रधरने उनसे पूछा— आप और भी कोई विद्या जानते हैं?

साधु बोले— हाँ, रमल विद्या जानता हूँ। उसके अनुसार गणना करके जो बतलाता हूँ, वह प्रायः सही निकलता है।

चक्रधरने कहा— आप मेरे भविष्यके बारेमें कुछ बतलाइये।

चक्रधरने उनको एक आसन दिया। वे उस आसनपर स्थिर चित्तसे बैठ गये और रमलके पाशे फेंकते रहे। पाशेमें जो आता, वे कागजपर लिख लेते थे। लगभग आधा घंटा उनको गणना करनेमें लगा होगा। इसके बाद उन्होंने कहा इतने वर्ष, इतने मास और इतने दिनके बाद तुम्हारा सर्वोच्च भाग्योदय होना चाहिये। यदि मेरी गणनामें कुछ त्रुटि रही होगी तो इसमें एक-दो दिनका अन्तर पड़ सकता है, अधिकका नहीं।*

* * * * *

माँ का आज्ञाकारी पुत्र

बचपनमें चक्रधर अपनी माँका बड़ा आज्ञाकारी था। गाँवसे थोड़ी दूरपर चचेरी बहिनका विवाह हुआ था। माँ अपने पुत्र चक्रधरको उसकी चचेरी बहिनके ससुराल भेजना चाहती थी। चक्रधरने जाना स्वीकार भी कर लिया। चक्रधरको भेजनेके लिये तैयारी की जाने लगी। द्वारपर पालकी आ गयी। इसी समय माँने अपने पुत्र चक्रधरसे कहा— क्या तुम मेरी एक बात मानोगे? मानो तो कहूँ?

माँकी समझमें ऐसा था कि पता नहीं मेरी बात यह मानेगा या नहीं। अब यह अँगरेजी स्कूलकी दसवीं कक्षामें पढ़ता है, न जाने कैसे-कैसे लड़कोंकी संगतिमें रहता है, अतः पता नहीं कि यह अपनी कुल-परम्पराका निर्वाह करेगा या नहीं। मनमें ऐसी दुविधा होनेके कारण माँने अपने पुत्रसे वैसा कहा था, परंतु वह तो मातृ-भक्त था ही। माँने

उन साधुने जो कहा था, वह सही निकला और लगभग उतने दिन बाद ही चक्रधरने संन्यास लिया था।

सामान्य धारणा रहती है कि नाटकमें अभिनय करनेवाला व्यक्ति भले ही किसी अन्य व्यक्तिको हँसी-मजाकका विषय बना ले और हँसी-हँसीमें उपहास कर ले, किंतु वह अपने अभिनय-कालमें भी ऐसा व्यवहार और ऐसा आचरण राजा साहबके प्रति नहीं करेगा, परंतु यहाँ तो बात ही दूसरी थी। जब चक्रधर राजा साहबपर अपने कंकड़का दूसरा निशाना साध रहा था और उनकी ओर लपक करके बढ़ रहा था, तब चक्रधरकी इस चेष्टासे सबके मनमें यह बात जँच गयी कि सचमुच ही कोई पागल आ गया है। राजा साहब वस्तुतः डर गये और अपनी कुर्सी छोड़ करके एक किनारे होने लग गये।

बादमें जब उनको यह ज्ञात हुआ कि यह पागल नहीं है, अपितु पागलका पार्ट करनेवाला चक्रधर मिश्र है, तब सबका बड़ा मनोरंजन हुआ। राजा साहबको अपने उठकर हटनेपर बड़ी शर्म आयी। सभी चक्रधरके अभिनय-कौशलपर आश्चर्य करने लगे।

'कबहुँक बिसमय कबहुँ अनंदा'।

* * * * *

रमल-विद्याविद् साधु

चक्रधर गया जिला-स्कूलमें पढ़ता था और छात्रावासमें रहता था। उस छात्रावासका फाटक लोहेकी छड़ोंसे बना हुआ था। उस फाटकपर चढ़कर चक्रधर झूल रहा था। फाटकपर चढ़े-चढ़े उसे कभी खोलना और कभी बन्द करना, तभी एक साधु सामने आया। उनके शरीरपर धोती-कुर्ता-साफा, सभी कुछ गेरुए रंगका था। उन्होंने चक्रधरसे कहा— बेटा! मुझे भूख लगी है, कुछ खानेको दो।

चक्रधरने कहा— मेरी पाकेटमें क्या है, यदि आप बता देंगे तो जो कुछ पाकेटमें है, वह सब मैं आपको दे दूँगा।

वे कुछ देरतक विचार करते रहे और फिर बोले— पाँच आना तीन पैसे।

उनके कहनेके बाद चक्रधरने अपनी पाकेट देखी। पाकेटसे ठीक इतने ही पैसे निकले। इससे चक्रधर बड़ा प्रभावित हुआ। चक्रधर उनको

ज्यों ही पूछा, त्यों ही चक्रधरने तत्काल कहा– मैं जरूर मानूँगा।

तब माँने कहा– अपनी बहिनके घरपर जा रहा है। तुम उस गाँवका पानी मत पीना। जब पानी ही नहीं पीना है, तब भोजन करनेकी बात ही कहाँ रह जाती है? जब तुम अपनी बहिनके घरपर पहुँचोगे तो तुम्हारे सामने जल-पात्र रखा जायेगा। तुम झुक करके और हाथ जोड़ करके उसको प्रणाम कर लेना। मैंने तुम्हारे लिये पूड़ी-साग बना दिया है। यह भोजन मैं तुम्हारे साथ पालकीमें रखवा दूँगी। उससे मिल लेनेके बाद गाँवकी सीमाके बाहर आकर जो कुआँ हो, उस कुएँपर बैठकर, अपना हाथ-पैर धोकर भोजन कर लेना, परंतु अपनी बहिनके घरकी तो बात ही क्या, उसके गाँवका न तो पानी ही पीना और न कोई वस्तु ही खाना। तुम पालकीमें जाओगे। पालकी ढोनेवाले चार कहाँर रहोंगे। वे चारों कहार तो तुम्हारी बहिनके घरपर ही खायेंगे। उन कहाँरोंको तुम वहाँ भोजन करवा देना, पर तुम अपने बारेमें तनिक भी ढीले मत पड़ना। कोई कितना भी अनुरोध करे, पर करना वैसे ही, जैसे मैंने कहा है।

चक्रधरने अपनी माँकी बात ज्यों-की-त्यों मान ली। गाँवसे चलनेके पूर्व घरका महरा आया। घरमें बर्तन माँजनेवालीको महरी और पानी भरनेवालेको महरा कहते हैं। वह घरका महरा कहने लगा– भइया! जिस गाँवको आप जा रहे हैं, उसी रास्तेमें उससे पहले जो गाँव पड़ता है, वहाँ मेरी बेटी ब्याही है। बाबू! जरा उससे भी मिल लेना तथा उसका भी हाल-चाल पूछ लेना।

महरेको भी चक्रधरने मिल लेनेका आश्वासन दिया। पालकीपर चढ़कर चक्रधर अपनी चचेरी बहिनके यहाँ चल दिया। बहिनके घर पहुँचनेपर बड़ा स्वागत-सत्कार हुआ। बहिनके घरपर खाने-पीनेके लिये बड़ा आग्रह किया गया, परंतु उस आग्रहको स्वीकार करनेकी बात ही समाप्त थी। जल-पात्र आया तो चक्रधरने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए उसका सम्मान किया। चारों कहारोंको बहिनके घरवालोंने भोजन करा दिया।

चक्रधरके साथ भोजनका सामान था ही। वह यही सोच रहा था कि यहाँ बहिनके घरसे विदा होनेके बाद पासवाले गाँवमें जाना ही है,

जहाँ महरेकी बेटी है। उस गाँवमें जाकर भोजन कर लूँगा, जल पी लूँगा और महरेकी बेटीसे भी मिल लूँगा। अब चचेरी बहिनसे विदा होनेका समय आया। जिसे देखकर बहिन बड़ी प्रसन्न हुई थी और जिससे मिलकर हृदयमें बड़ा प्यार उमड़ा था, उसी भाई चक्रधरको बहिनने बड़े भारी मनसे विदाई दी।

पालकीमें बैठकर चक्रधर उस गाँवमें आया, जहाँ महरेकी बेटी थी। महरेने नाम और पता ठीक प्रकारसे बता दिया था। वह गाँव बहुत छोटा था, अतः पता लगानेमें देर नहीं लगी। चक्रधरने महरेकी बेटीको बुलवाया। वह लड़की दौड़ी-दौड़ी आयी। उसने चक्रधरको प्रणाम किया। चक्रधरने उसके हाथपर पाँच रुपये रख दिये। उस समयके पाँच रुपये आजके कई सौ रुपयेसे भी अधिक हैं। इसकी तो वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी। उसकी आँखोंसे झर-झर आँसू बह चले।

अब उस गाँवमें खाने-पीनेका प्रश्न आया। पहले तो चक्रधरने सोचा ही था कि महरेकी बेटीवाले गाँवमें भोजन कर लूँगा, पर अब मन बदल गया। जिसे बहिन मानकर पाँच रुपया दे दिया, उसके गाँवके बारेमें भी वही नियम है, जो नियम अपनी चचेरी बहिनके गाँवके लिये है। मनमें इतना आते ही चक्रधरने कहारोंसे पालकी उठानेके लिये कहा। लोगोंने बहुत कहा कि यहाँ खा-पीकर आगे जाना चाहिये तो चक्रधरका यही उत्तर था— बहिनके गाँवका मैं अन्न-जल कैसे ग्रहण कर सकता हूँ?

कुछ लोगोंने समझाना चाहा— यह न तो आपकी सगी बहिन है, न कुलकी बहिन है, न आपके कुटुम्बकी है, न आपके जातिकी है, मात्र महरेकी बेटी है, अतः यहाँ भोजन करनेमें एवं विश्राम करनेमें आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

चक्रधरने कहा— आपका कहना ठीक है, पर जिसे बहिन मान लिया, उसके गाँवमें खाना-पीना कैसे हो सकता है? बहिनका नाता चाहे रक्त-सम्बन्धसे हो अथवा धर्म-सम्बन्धसे हो, पर जब बहिन कह दिया तो फिर उसके गाँवमें अन्न-जल ग्रहण करना उचित नहीं।

लोगोंने देखा कि चक्रधर अपना आग्रह छोड़नेके लिये प्रस्तुत नहीं है। तब फिर एक और निकट गाँवके ब्राह्मण-गृहमें चक्रधरके

खाने-पीनेका प्रबन्ध किया गया। भोजनके आसनपर बैठनेके पहले उसने अपने कपड़े निकाले, हाथ-पैर धोये और फिर भोजनके लिये बैठा।

उपस्थित लोगोंको उसकी इस सारी क्रियामें दम्भ एवं आडम्बर दिखलायी देने लगा। प्रखर शैक्षणिक प्रतिभा, उत्कट देशभक्ति तथा साहसिक राजनैतिक कार्योंके लिये चक्रधर आस-पासके कई गाँवोंमें विख्यात था। जब वह भोजन करने लगा तो उपस्थित लोगोंमेंसे एकने आड़े हाथ लेनेकी भावनासे प्रश्न किया— हमने सुना है कि आप तो मुसलमानका छुआ भी खाते हैं। एक ओर तो ऐसी सुनी हुई बात है और दूसरी ओर यहाँ आचार-विचारका पालन करते हुए आप शौचाचारका इतना अधिक प्रदर्शन कर रहे हैं कि उसकी सीमा नहीं। अब आप ही बतलायें कि सत्य क्या है?

चक्रधरने कहा— मैंने मुसलमानका छुआ हुआ तो नहीं खाया है, परंतु राजनैतिक सम्मेलनोंमें मुसलमानके साथ बैठकर एक टेबुलपर अवश्य खाया है।

उस व्यक्तिने पुनः प्रश्न किया— आज आप वस्त्र उतार करके और हाथ-पैर धो करके आसनपर बैठे हैं, क्या आप सदा ही इसी प्रकार भोजन करनेके पूर्व करते हैं?

चक्रधरने स्पष्ट कहा— नहीं, मैं ऐसा नहीं करता। सत्य तो यह है कि मैं ऐसा आज पहली बार ही कर रहा हूँ। इसके साथ-साथ यह भी सत्य है कि यहाँसे जानेके बाद वही पुराना ढंग व्यवहारमें आ जायेगा। फिर आपके मनमें यह बात उठ सकती है कि मैं बड़ा ढोंगी हूँ और अपने सम्बन्धियोंके सामने शौचाचारका स्वांग रचता हूँ। वास्तविकता यह नहीं है। सच्ची बात यह कि मैं अपनी माँकी आज्ञाका पालन करनेके लिये ऐसा कर रहा हूँ। इस प्रकारके आचार-विचार-व्यवहारके पीछे एक मात्र कारण है मेरी माँकी आज्ञा। घरसे चलनेके पूर्व माँने जो कहा था और जो मैंने वचन दिया था, उसीका पालन कर रहा हूँ। यदि मेरी माँने कुछ न कहा होता तो मैं अपनी चचेरी बहिनके घरपर ही खा-पी लिया होता, किंतु माँके द्वारा मना कर दिये जानेके बाद मैं विवश था। आप विश्वास करें, माँकी आज्ञा-पालनके रूपमें मैं यह कर रहा हूँ। अब आप इसे दम्भ कहें

अथवा प्रदर्शन।

चक्रधरकी इस मातृ-परायणता और सत्य-वादिताका सभी उपस्थित लोगोंपर बड़ा प्रभाव पड़ा।

* * * * *

नारी-मात्र में मातृ-भाव

प्रसंग फखरपुर ग्रामका है। गाँवके राजासाहबके छोटे भाईका विवाह था। छोटा भाई चक्रधरका मित्र था। राजा साहबने कहा कि मिश्रजी, आपको भी बरातमें चलना है। उनका इतना स्नेह था कि उस आग्रहको टालना सम्भव नहीं था। बरात दरभंगाकी ओर गयी थी। रातको मजलिस बैठी। उस मजलिसमें गानेके लिये श्रीदुर्गेशनन्दिनी वाराणसीसे आयी थी। उसे लोग वेश्या कहते तो थे, पर वस्तुतः वह गायनका ही कार्य करती थी। वह गाती बहुत ही उत्तम थी। रातको जब मजलिस बैठी तो मजलिसमें चक्रधर नहीं थे। तब दुल्हाने अपना एक व्यक्ति भेजा और कहा कि मिश्रजीको ले आवो। यदि सीधे न आयें तो चार व्यक्तियोंसे हाथ-पैर पकड़ कर ले आवो। दुल्हेके व्यक्ति चक्रधरके पास पहुँचे। उन्होंने सब बातें चक्रधरको बतलायीं। सब बातें सुनकर चक्रधरने मन-ही-मन सोचा कि जब दुल्हेने ऐसे कहा है तो समझदारी इसीमें है कि स्वतः चल चला जाये। चक्रधर मजलिसमें गया और दुल्हेने उनको अपने बगलमें बैठनेके लिये स्थान दिया। पान खाते हुए चक्रधर वहाँ बैठ गये।

जब दुल्हेने अपने बगलमें चक्रधरको स्थान दिया तो गायकोंने समझा कि यह कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। श्रीदुर्गेशनन्दिनीने दुल्हेको सलाम किया और फिर चक्रधरको सलाम किया तथा चक्रधरसे पूछा— कहिये, खिदमतमें क्या पेश करूँ?

उस गायिकाके ऐसा कहनेपर चक्रधरने कहा— माँ! मुझे तो संगीत आता नहीं। मैं क्या कहूँ कि क्या गावो। यहाँ तो संगीतके कई मर्मज्ञ बैठे हैं। इस बारेमें तो उनसे पूछना चाहिये।

चक्रधरके मुखसे 'माँ' शब्दको सुनकर वह विस्मित हो उठी। जिसे सदा हेय शब्दोंसे सम्बोधित किया गया हो, उसे कोई माँ कह

सकता है, वह भी एक भरी सभामें कोई माँ कहकर सम्बोधित कर सकता है, इस भावने उसके मनको झकझोर दिया। जबतक वह उस सभामें रही, सारे समय चक्रधरकी ओर विस्मय, पवित्रता और वात्सल्यके भावोंसे समन्वित होकर देखती रही। फिर उससे विलासतोड़ी राग सुनानेको कहा गया। उसने लगभग चालीस मिनटतक गाया होगा। ऐसा लगता था मानो राग-रागिनी उसके अधरोंपर खेलती रहती हैं। उस सस्तीके जमानेमें भी एक रातके लिये चार सौ रुपयेपर वह आयी थी।

* * * * *

वैवाहिक बन्धन

होनहार व्यक्तित्वकी कान्ति अलग ही होती है। जिस प्रकार पूर्व दिशामें फैलनेवाली अरुणाभा सूर्योदयकी पूर्व-सूचिका है, इसी प्रकार बाल्यकाल एवं किशोरावस्थामें सहज रूपसे दिखलायी दे जानेवाले विशिष्ट आचार-विचार-व्यवहार भावी जीवनकी महत्ता-दिव्यता-विशिष्टता आदिका पूर्व-संकेत देते हैं। चक्रधरकी जैसी प्रतिभा-बुद्धिमत्ता-वाक्पटुता-सेवातत्परता थी, उससे सहज ही घरवालोंको अनुमान हो गया कि भविष्यमें यह महान पुरुष होगा। महान होकर भी यह महान व्यक्ति पारिवारिक जीवनमें सहयोगी बना रहे, ऐसी चाह पारिवारिक जनोंमें रहती ही है और इस चाहकी पूर्तिके लिये एक ही उपाय है कि उसका विवाह करवा दिया जाय। वैवाहिक जीवनका मनोहर पाश उसे पारिवारिक जनोंसे छिटकने नहीं देगा।

ऐसी ही कुछ विचार-धारासे प्रेरित होकर किशोर चक्रधरका विवाह चौदह वर्षकी आयुमें कर दिया गया। उन दिनों बालविवाह एक सामान्य परम्परा थी। विवाहित होकर सौभाग्यवती श्रीजगाधरी देवीको ही किशोर चक्रधरकी धर्मपत्नी कहलानेका सुयश प्राप्त हुआ। विवाहके समय सौ. श्रीजगाधरी देवीकी आयु मात्र नौ वर्ष थी। भविष्यमें एक बालकका जन्म भी हुआ, पर वह मृत था। पारिवारिक जनोंने विवाह तो करवा दिया, परन्तु यह मनोहर पाश उस महान व्यक्तित्वको अपने बन्धनमें रख नहीं पाया। सच्चिदानन्दमय दिव्य आध्यात्मिक लक्ष्यकी

प्राप्तिके लिये प्रयत्नशील एवं जागरूक 'पथिक' के लिये इस बन्धनका अतिक्रमण आवश्यक हो गया।

* * * * *

सिद्ध अवधूत-संत का अनुग्रह

चक्रधरकी आयु पन्द्रह वर्षकी थी और वह गया शहरमें नवीं कक्षाका छात्र था।

वह छात्रालयमें रहता था। गयाकी कलक्टरी कचहरीके बाहरी द्वारपर एक नंग-धड़ंग साधु अवधूत स्थितिमें पड़े रहा करते थे। लोग कहा करते थे कि वे सिद्ध कोटिके महात्मा हैं, पर चक्रधर तो उन दिनों महात्माओंकी जीवन-शैलीका बड़ा निन्दक था। वह आलोचनाके स्वरमें कहा करता था कि ये हट्टे-कट्टे मोटे-ताजे साधु समाजके लिये भार हैं, जो कमाते नहीं; बस, पड़े रहते हैं। उसे क्या पता था कि एक दिन उसी प्रकारका साधु-जीवन वह भी अंगीकार करेगा।

उन अवधूत साधुकी सिद्धिके बारेमें उसने एक प्रसंग सुना था। उन दिनों अँगरेजोंका राज्य था। गया जिलेका कलक्टर अँगरेज था। वह घोड़ेपर चढ़कर अपने आफिस जाया करता था। वह कलक्टर अच्छे स्वभावका था। पहली-पहली बार जब वह घोड़ेपर चढ़कर आफिस जा रहा था तो द्वारपर वह साधु पड़ा हुआ दिखायी दिया। सिपाही लोग उस साधुको हाथ-पैर पकड़कर हटाने लगे तो उसने टूटी-फूटी हिन्दीमें कहा कि छोड़ दो, इसे छोड़ दो। अब जब भी वह आफिस जाता तो कलक्टरी कचहरीके द्वारपर यह साधु मिलता। साधुके सामने आते ही वह अपना घोड़ा रोक देता, अपने हैटको सिरपरसे उतारकर तथा ऊँचा करके साधुका अभिवन्दन करता और फिर हैट सिरपर रखकर अपने आफिस चला जाता। ऐसा वह कलक्टर रोज करता। इस तरह कुछ दिन निकल गये। एक दिन जब वह ऐसा कर रहा था, तब उन अवधूत साधुने गुनगुनाते हुए कुछ कहा। उनके कहनेका भाव यह था कि तेरी उन्नति हो जाये। इस आशीर्वादके मिलनेके थोड़े दिनोंके बाद ही, शायद चौदह-पन्द्रह दिनोंके बाद ही कमिश्नरके रूपमें उसकी पदोन्नति हो गयी।

छात्रालयके सहपाठियों और साथियोंपर चक्रधरका रोब था। जो लड़का पढ़नेमें-बोलनेमें जरा तेज होता है, उसका प्रभाव अन्य छात्रोंपर पड़ता ही है। उसने अपने कुछ साथियोंसे कहा कि चलो, आज उस साधुको तंग किया जाये। उन लोगोंमें श्रद्धा-बुद्धि तो थी नहीं। वे तीन-चार साथी कचहरीके द्वारपर जा पहुँचे। उनमेंसे किसीने किसी प्रकारसे, किसीने किसी प्रकारसे उनको परेशान किया। वे सब उनको तंग करनेकी नीयतसे ही आये थे। अन्तमें चक्रधरकी बारी आयी। वह उनको गुदगुदाने लगा। वे खिलखिलाकर हँसने लगे। वे खूब हँसे; बस, हँसते ही रहे तथा बार-बार कहते रहे— 'लरिकाईकी बान तोरी ना छूटी कन्हैया', 'लरिकाईकी बान तोरी ना छूटी कन्हैया'। वे रह-रहकर खिलखिलाकर हँसते जायें तथा यह वाक्य दोहराते जायें। वे इतने हृष्ट-पुष्ट थे, इतने ताकतवर थे कि यदि कहीं उन्होंने चक्रधरका हाथ पकड़ लिया होता तो छुड़ाना सम्भव ही नहीं था, पर उन्होंने न उसे पकड़ा, न उसे डाँटा और न गुदगुदानेसे ही मना किया। हँसते रहनेसे उनका स्थूल शरीर खूब हिल रहा था। अन्तमें चक्रधर ही थक गया और थककर गुदगुदाना छोड़ दिया।

वे सभी साथी लोग वापस आ गये, पर उन संतकी संनिधिका प्रभाव अद्‌भुत था। भले चक्रधर उन्हें तंग करनेके लिये गया था, पर उनके अल्पकालिक सम्पर्कका प्रभाव ऐसा था कि इस घटनाके तीन-चार दिन बादसे उसकी वृत्तियोंमें क्रमशः स्वतः परिवर्तन होने लग गया। चित्तकी चञ्चलता मिटने लग गयी थी। वृत्तियाँ शान्त हो गयीं। उसका व्यवहार पहलेकी अपेक्षा बहुत सौम्य हो गया। वस्तुतः संतका सम्पर्क अमोघ होता है।*

* * * * *

*बाबा बतलाया करते थे— मुझे मेरे जीवनमें आठ महासिद्ध संतोंके दर्शन हुए हैं और मुझे उनका कृपा-पात्र बननेका सौभाग्य मिला है। मैं तो सदा ही साधुओं-संतोंका कृपा-पात्र रहा हूँ।

देशभक्ति और धर्मानुराग

चक्रधर जिन दिनों विद्यालयमें पढ़ता था, उन दिनों अँगरेजोंको भारतदेशकी सीमासे बाहर निकालनेके लिये भारतीय युवकोंने जो-जो किया, वह सब सदैव ही भारतीय इतिहासका स्वर्णिम एवं स्मरणीय वृत्त रहेगा। चक्रधर अपने विद्यार्थी-जीवनमें अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटीका सदस्य था और उसने राजनैतिक आन्दोलनोंमें खुलकर भाग लिया। एक बार बिहारप्रदेशके किसी नगरमें काँग्रेसकी वर्किंग कमेटीकी बैठक थी। उस अधिवेशनमें चक्रधर भी गया था। उस बैठकमें मंचपर बैठनेके लिये आनेवाले प्रतिनिधियोंमें एक प्रकारकी प्रतिस्पर्धा थी। भले कार्यक्षेत्रमें सक्रिय न हों, पर कौन नहीं चाहता कि मैं सबके दृष्टि-पथपर आ जाऊँ और मेरा नाम समाचारपत्रोंमें छप जाये? किस-किसको मना किया जाये, अतः बैठनेवाले मंचपर बैठे ही। प्रतिस्पर्धाकी इस वृत्तिके प्रति बड़ी हेय भावना होनेके कारण चक्रधर मंचपर नहीं बैठा, कहीं दूर बैठा था। इस बैठकमें एक प्रस्ताव कमेटीके सामने आया। उसका पारित होना जनहितकी दृष्टिसे वस्तुतः आवश्यक था, परंतु जितने भी वक्ता खड़े हुए, वे सब उस प्रस्तावके विरुद्ध ही बोलते चले गये। जनताकी मतिके सम्बन्धमें क्या कहा जाये? जिधर कोई बहा ले जाये, उधर ही बह जाती है। उन दिनों हाथ उठाकर प्रस्तावके पक्षमें सम्मति देनेकी प्रथा थी। जिन सदस्योंने उस प्रस्तावको सामने रखा था, उन लोगोंको ऐसा लगा कि प्रस्ताव गिर जायेगा। उन्होंने विचार किया कि यदि मिश्रजी (चक्रधर) होते तो बात बन जाती। दूर कोनेमें बैठे हुए मिश्रजी दिखलायी दे गये। फिर उनको भाषण देनेके लिये मंचपर बुलाया गया। अंतमें चक्रधरका भाषण हुआ। भाषणमें चक्रधरने यही कहा कि मंचपर बात बनाना आसान है परंतु उन भाइयोंके भीषण कष्टोंकी कुछ कल्पना करें, जो जेलमें यातना भोग रहे हैं और उन बहिनोंकी विकट परिस्थितिका कुछ विचार करें, जिनके सिरका सिन्दूर बन्दूककी गोलियोंने पोंछ दिया है। सभाका सारा वातावरण ऐसा बदला कि प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पारित हुआ।

* * *

डाक्टर श्रीराजेन्द्रप्रसादजी थे तो अखिल भारतीय स्तरके नेता, परंतु बिहारके राजनैतिक आन्दोलनके संचालनका भार मुख्यतः इन्हीं श्रीराजेन्द्रबाबूपर था। इन आन्दोलनोंमें भाग लेनेके कारण चक्रधरका श्रीराजेन्द्रबाबूसे निकट सम्पर्क था। भविष्यमें ये श्रीराजेन्द्रबाबू भारतके प्रथम राष्ट्रपति बने।

* * *

चक्रधर गया जिला-स्कूलमें पढ़ता था और उसका एक मित्र मदनमोहन सिंह टिकारीराज स्कूलमें पढ़ता था। वे दोनों एक साथ ही स्कूलकी पढ़ाईको छोड़कर महात्मा गाँधी द्वारा छेड़े गये सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें सम्मिलित हुए थे। गया काँग्रेस कमेटीमें वे लोग एक साथ काम करने लगे। विभिन्न स्थानोंपर घूम-घूमकर प्रचार किया करते थे। उस समय ज्यादातर गाँधी विचारधाराकी पुस्तकें पढ़ते थे। 'नवजीवन' पत्रिकामें गाँधीजीके जो विचार छपते थे, उसका उन लोगोंपर काफी असर था।

* * *

सन् १९२८ में चक्रधर गया नगरके सरकारी जिला स्कूलकी कक्षा नौ में पढ़ता था। उस समय चक्रधरकी आयु १५ वर्षकी थी। उस जिला स्कूलमें एक मुसलमान मास्टर साहब थे। उनका नाम था जनाब खालिक साहब। वे कक्षामें पढ़ाते समय हिन्दू धर्मकी बड़ी निन्दा किया करते थे। धर्म-निन्दा सभी हिन्दू विद्यार्थियोंको बड़ी चुभती थी। चक्रधर कक्षाके सारे विद्यार्थियोंमें अग्रगण्य था। सहपाठियोंने चक्रधरसे कहा कि कभी अवसर देखकर मास्टर साहबसे धर्म-निन्दा नहीं करनेके लिये प्रार्थना करनी चाहिये। एक दिन कक्षामें बड़ी ही शिष्टतापूर्वक चक्रधरने मास्टर साहबसे कहा– आप हिन्दू धर्मकी निन्दा करते हैं, यह हम सभी हिन्दू विद्यार्थियोंको अप्रिय लगती है। हमारा तो आपसे यही अनुरोध है कि आप हिन्दू धर्मकी निन्दा न किया करें।

चक्रधरके द्वारा इतना कहा जाना था कि वे बहुत क्रोधित हो उठे। उनका क्रोध भभक उठा। उन्होंने अभद्र रीतिसे चक्रधरको डाँटा। चक्रधर अपनी कुर्सीपर चुपचाप बैठ गया। मास्टर साहब हिन्दू धर्मकी

आलोचना बन्द करनेके स्थानपर और भी अधिक करने लग गये। एक बार फिर चक्रधरने मास्टर साहबसे हिन्दू धर्मकी निन्दा न करनेके लिये प्रार्थना की, पर फल उल्टा निकला। मास्टर साहब और कटु निन्दा करने लग गये। चक्रधर भी अपनी धुनका पक्का था। उस समय गया नगरमें वे हिन्दू लोग, जो अरबी-फारसीके विद्वान थे तथा जिन्हें कुरानकी आयतों और हदीसका अध्ययन था, उनसे चक्रधरने अपना सम्पर्क बढ़ाया। चक्रधर उनसे वे-वे स्थल तथा प्रसंग पूछता, जिनके आधारपर इस्लाम धर्मकी न्यूनताएँ बतलायी जा सकें। उन्होंने ये सब प्रसंग चक्रधरको बताये। इसके अतिरिक्त चक्रधर पुस्तकालयोंमें भी जाता तथा पुस्तकोंसे न्यूनता बतलाने वाले अनेक प्रसंगोंको भली प्रकारसे लिख लेता। क्रमशः चक्रधरने पर्याप्त सामग्री इकट्ठी कर ली, जिससे इस्लाम धर्मकी न्यूनताओंकी ओर संकेत किया जा सके।

एक दिन कक्षामें पढ़ाते समय जब मास्टर साहब अपनी आदतके अनुसार हिन्दू धर्मकी निन्दा कर रहे थे, तब चक्रधर अपनी कुर्सीपरसे उठा और कहने लगा– यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ निवेदन करूँ।

उनसे अनुमति मिलनेपर कक्षामें सभी विद्यार्थियोंके सामने चक्रधर कहने लगा– हर धर्ममें भली और बुरी बातें रहा करती हैं। जिस तरह आप हिन्दू धर्मकी निन्दा करते हैं, उसी प्रकार इस्लाम धर्मके भी कुछ पक्ष आलोचना योग्य हैं।

इतना कहकर चक्रधरने जो-जो सामग्री इकट्ठी की थी, उनको कहने लगा। मास्टर साहब तो पहलेसे ही चक्रधरसे चिढ़े हुए थे, अब चक्रधरके द्वारा इन सब बातोंका कहा जाना ऐसा ही था मानो क्रोधाग्निमें घी पड़ गया हो। क्रोधावतार बनकर मास्टर श्रीखालिक साहब कहने लगे– तुम अपनेको बहुत बड़ा समझते हो क्या? तुम बहुत बढ़-बढ़ करके बोल रहे हो। बहुत जल्द ही तुमको इसका मजा चखाऊँगा।

मास्टर साहब चक्रधरका अनिष्ट करनेके लिये उतारू हो गये और वे ऐसे अवसरकी ताकमें थे, जिससे चक्रधरको कड़ा दण्ड दिया जा सके। इन दिनों महात्मा गाँधीके नेतृत्वमें काँग्रेसने स्वदेशी आन्दोलन